भारत का विधि आयोग

एक सौ अठारहवीं रिपोर्ट

अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्ति की पद्धति

दिसम्बर, 1986

349.954R
M6.118;1

भारत के विधि आयोग की एक सौ अठारहवीं रिपोर्ट का शुद्धिपत्र :—

पृष्ठ सं०	पैरा	पंक्ति	के स्थान पर	पढ़ें
(i)	3	12	न्याय लिका में राष्ट्र	न्यायपालिका को राष्ट्र
1	2	9	पृथक संवर्गों	पृथक् संवर्गों
1	1.2	6	सकता जिसमें	सकता है जिसमें
9	2.7	4	अभिर्धिारित	अभिनिर्धारित
9	2.7	4	स्वकारेण	स्वयं
10	3.3	19	परस्थापित	पर स्थापित
11	3.4	12	उपक्रम	उपबंध
11	3.5	1	3.5. विधि आयोग	3.5 [1]विधि आयोग
12	4.2	7	233 (1), तथा (2)	233(1), (2),
13	4.3	6	सर्वच्छादी	सर्वछादी
13	4.4	2	कि जिससे	जिससे कि
13	पाद टिप्पण-2	--	विरुद्ध	बनाम
14	4.7	17	सथा	संस्था
14	पाद टिप्पण-2	---	ड्यूरिंस	ड्यूरिंग
15	4.9	9	बाजार	बाहर
15	4.10	13	पदाधिमानों	पदाभिधानों
16	---	1	पुनगठन	पुनर्गठन
16	---	7	जिला नगरों	जिलो, नगरों
16	4.11	9	वरिष्ठ प्रभाव	(वरिष्ठ प्रभाग)
16	4.12	3	इन पद	इन पदों
17	5.1	3	भरती	भर्ती
17	5.2	4	भरती	भर्ती
18	5.3	3	व्यवसाय के	व्यवसाय करने के
18	-यथोक्त-	3	अवहास	अवह्रास
18	-यथोक्त-	8	लिया है।"	लिया है।"[1]
18	-यथोक्त-	15	नहीं है।[1]	नहीं है।[2]
18	पाद टिप्पण-1 को "2" के रूप में पुनर्संख्यांकित करें तथा उससे पूर्व "1. भारत का विधि आयोग की 14 वीं रिपोर्ट, खंड 1, अध्याय 9, पैरा 11, पृष्ठ 165।" पढ़ें।			
19	6(च)	2	जिनके कि सम्मिलित	जिनके सम्मिलित
19	6(च)	3	अनुशंसित	अनुशासित

अर्द्ध० शास० पत्र क्र०एफ 2(6)/86 वि०आ०

डी० ए० देसाई,
अध्यक्ष,

श्री अशोक कुमार सेन,
विधि और न्यायमंत्री,
भारत सरकार,
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली ।

विधि आयोग
भारत सरकार
शास्त्री भवन,
नई दिल्ली ।

26 दिसम्बर, 1986

प्रिय विधि और न्याय मंत्री जी,

इस आयोग को अपनी 5वीं रिपोर्ट (विधि आयोग की 118वीं रिपोर्ट), भेजते हुए प्रसन्नता है। यह रिपोर्ट, न्यायिक सुधारों के अध्ययन के संबंध में निर्देश के निबन्धनों की मद क्रमांक 4---अधीनस्थ न्यायालयों/अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्ति की पद्धति--से संबंधित है।

जैसा कि अब तक आपके ध्यान में आया होगा, विधि आयोग द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्टों की एक श्रृंखला है और वे परस्पर संबद्ध हैं।

जैसा कि मैंने आपको अपने पूर्व पत्र में सूचित किया था, विधि आयोग द्वारा अब तक इतनी पर्याप्त सामग्री दी जा चुकी है कि ग्राम न्यायालयों (आयोग की 114वीं रिपोर्ट) की स्थापना करके, अखिल भारतीय न्यायिक सेवा (आयोग की 116वीं रिपोर्ट,) सृजित करके, सभी स्तरों पर के न्यायिक अधिकारियों के प्रशिक्षण (आयोग की 117वीं रिपोर्ट) के लिए अकादमी स्थापित करके और, अधीनस्थ न्यायालयों/अधीनस्थ न्यायपालिका का पुनर्गठन (जो इस रिपोर्ट का भागरूप है) करके, न्यायिक सुधारों का सूत्रपात करने का कार्य हाथ में लिया जा सकता है। आप इन रिपोर्टों की पारस्परिक संबद्धता को समझ सकेंगे। इसके साथ ही केन्द्रीय कर न्यायालय के संबंध में भी रिपोर्ट है---(विधि आयोग की 115वीं रिपोर्ट)। यदि अब तक प्रस्तुत की गई इन सभी रिपोर्टों को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित किया जाता है तो उच्च न्यायालयों में लंबित मामलों, ग्रामों में रहने वाले गरीबों की न्याय के स्थान तक पहुंच, न्यायिक कर्मियों को संविधान के दर्शन, आर्थिक आयोजना, तथा न्यायपालिका से राष्ट्र की आशाओं से परिचित कराने की दृष्टि से, उनकी जानकारी का दायरा बढ़ाने आदि सभी बातों पर उसका स्पष्ट प्रभाव पड़ेगा।

आपको इस बात की पूरी तरह से जानकारी है कि राज्य स्तर पर न्यायपालिका के स्तर में इस सीमा तक गिरावट आई है कि उसने उसे उसकी गरिमा और विश्वसनीयता से वंचित कर दिया है। इस रिपोर्ट से सरकार को राज्य स्तर पर अधीनस्थ न्यायपालिका को संसदीय विधान द्वारा पुनर्गठित करने में सहायता मिलेगी। पूरा ढांचा परिवर्तन की प्रक्रिया से गुजरेगा।

विधि आयोग की समय सारणी में, विचार-विमर्श के लिए अगला विषय राष्ट्रीय न्यायिक सेवा आयोग, जो न्यायिक नियुक्तियों के लिए एक अधिशासी मण्डल होगा, तथा न्यायिक सेवा अधिकरण है।

सादर,

भवदीय

(डी० ए० देसाई)

संलग्न—रिपोर्ट

विषय--सूची

		पृष्ठ
अध्याय 1	प्रस्तावनात्मक	1
अध्याय 2	अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती	5
अध्याय 3	अधीनस्थ न्यायालयों के संबंध में विचार करने की सक्षमता/अधिकारिता	10
अध्याय 4	अधीनस्थ न्यायपालिका का पुनर्गठन	12
अध्याय 5	विचार और समीक्षा	17
अध्याय 6	निष्कर्ष	19
उपाबंध 1		21
उपाबंध 2		37

अध्याय 1

प्रस्तावनात्मक

1.1 भारत में न्यायालय की संरचना स्तूपाकार है। अमेरीका की द्वैध न्यायालय प्रणाली—परिसंघीय और राजकीय—के विपरीत भारत में एकाश्म प्रणाली है। न्यायिक सेवा की वस्तुतः वही संरचना है, अन्तर है, तो केवल पदाभिधानों में। न्यायालयों के पदाभिधान उनके कृत्य दर्शित करते हैं। वे मुख्यतः प्रक्रिया विहित करने वाली महत्वपूर्ण संहिताओं,—सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 से किए गए हैं और स्थानीय कानूनों द्वारा आभूषित किए गए हैं। कार्यभार के आधार पर यह अवधारित किया जाता है कि क्या पीठासीन अधिकारी को सुसंगत कानूनों द्वारा उस पर प्रदत्त शक्तियों के साथ दोनों न्यायालयों की अध्यक्षता करनी चाहिए। आधारिक स्तर के न्यायालय उन विवादों के संबंध में, जिनमें उच्च धनीय दावे अन्तर्वलित नहीं हैं, समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथापि न्यायालयों और उनमें रखे गए कार्मिकों के पदाभिधान एक राज्य से दूसरे राज्य में भिन्न-भिन्न होते हैं। यदि संपूर्ण रूप से विचार किया जाए, तो वे ऐसे ढांचे के अन्तर्गत आते हैं जो निम्नतम स्तर से प्रारंभ होता है।

आधारिक स्तर पर, ऐसे न्यायालय हैं जिन्हें विभिन्न नामों से नामांकित किया जाता है जैसे मुंसिफ मजिस्ट्रेट या सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग), न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग। कुछ राज्यों में, मुंसिफ को जिला मुंसिफ भी कहा जाता है। कुछ राज्यों में, न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वितीय वर्ग के पद हैं किन्तु अब वे अस्तित्व में नहीं रह गए हैं। वर्तमान में जो स्पष्ट स्थिति है वह यह है कि आधारिक स्तर पर मुंसिफ, जिला मुंसिफ/मजिस्ट्रेट या सिविल न्यायाधीश (क० प्र०)/न्या०म०प्र० वर्ग का न्यायालय है। इसे प्राथमिक या प्रारंभिक आधिकारिता का न्यायालय कहा जाता है। अधिकांश विवाद, अधिकतम धनीय सीमा के अध्यधीन रहते हुए, निर्धारण के लिए इन न्यायालयों में लाए जाते हैं। कुछ राज्यों में जहां कार्यभार की दृष्टि से दो पृथक् संवर्गों की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती, वहां मुंसिफ को न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग की शक्तियों से विनिहित किया जाता है। इसी प्रकार की स्थिति सिविल न्यायाधीश (क०प्र०) के संबंध में है, जैसी कि महाराष्ट्र और गुजरात में है। इस संवर्ग के सदस्यों को, जब इन्हें बड़े नगरीय क्षेत्रों में पदस्थ किया जाता है, या तो केवल सिविल कार्य सौंपा जाता है या केवल दाण्डिक कार्य। जब-जब उन्हें महानगरीय क्षेत्रों में पदस्थ किया जाता है, जैसा कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 6 और 8 में परिकल्पित है, तब उन्हें दं० प्र० संहिता की धारा 12 में परिकल्पित किए अनुसार महानगर मजिस्ट्रेट और मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट कहा जाता है।

1.2 ऊर्ध्वतः ऊपर की ओर न्यायालयों के आगामी समुच्चय को जिला तथा सेशन न्यायाधीश के न्यायालय कहा जाता है जिनके अन्तर्गत अपर न्यायाधीश, संयुक्त न्यायाधीश या सहायक न्यायाधीश के न्यायालय भी हैं। कुछ राज्यों में ऐसा न्यायालय भी है जिसे सिविल और सेशन न्यायाधीश का न्यायालय कहा जाता है। इन न्यायालयों को साधारणतः असीमित धनीय अधिकारिता होती है और न्यायालय के प्रभारी पदधारी को प्रदत्त शक्तियों पर निर्भर करते हुए, वह ऐसे आपराधिक मामले ले सकता जिनमें अधिकतम दण्ड सात वर्ष से अधिक न हो। कुछ राज्यों में उन्हें अधीनस्थ न्यायाधीश का न्यायालय कहा जाता है। प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय अधिनियम, जो प्रेसीडेन्सी नगरों को छोड़कर अन्य स्थानों को लागू होता है तथा प्रेसीडेन्सी लघुवाद न्यायालय अधिनियम, जो प्रेसीडेन्सी नगरों को लागू होता है, के अधीन भी न्यायालय स्थापित किए गए हैं। प्रथम वर्णित न्यायालय, जिला न्यायालय के अधीन हैं और अन्तिम वर्णित न्यायालय, उच्च न्यायालय के अधीनस्थ हैं। इन न्यायालयों के भारसाधक न्यायाधीश को लघुवाद न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में पदाभिहित किया जाता है और समान न्यायाधीशों में से प्रथम को न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश कहा जाता है।

में सीमांकित किए गए जिले पर, जिसे राजस्व जिले के नाम से भी जाना जाता है, अधिकारिता होती है, किन्तु कहीं-कहीं ऐसी स्थिति भी है जहां दो राजस्व जिलों पर अधिकारिता रखने वाला एक ही जिला न्यायालय हो सकता है । वास्तव में प्रत्येक राज्य को प्रशासन की इकाइयों के रूप में जिलों में बांटा गया है और प्रत्येक जिले को तालुकों/तहसीलों में और प्रत्येक तालुक/तहसील में पास-पास स्थित ग्राम समाविष्ट हैं । किन्तु ये केवल प्रशासनिक इकाइयां हैं। नगरीय क्षेत्रों को छोड़कर न्यायालय की संरचना, न्यूनाधिक रूप से इन प्रशासनिक इकाइयों के समरूप है । मामूली तौर से, मुंसिफ/जिला मुंसिफ तथा मजिस्ट्रेट या सिविल न्यायाधीश (क०प्र०)/न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय नाम से वर्णित न्यायालय तालुक/तहसील स्तर पर स्थापित किया जाता है किन्तु उसमें संस्थित किए गए वादों या मामलों की संख्या के अनुसार उसे एक से अधिक तालुकों/तहसीलों पर अधिकारिता प्राप्त हो सकती है। इसी प्रकार, कार्य भार पर निर्भर करते हुए, एक जिला न्यायालय को एक से अधिक जिलों पर अधिकारिता प्राप्त हो सकती है । लघुवाद न्यायालय या तो प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय अधिनियम के अधीन जिला स्तर पर या प्रेसीडेन्सी लघुवाद न्यायालय अधिनियम के अधीन प्रेसीडेन्सी नगरों या महानगरों में स्थापित किए जाते हैं। भारत में न्यायालयों के ढांचे की यह आधारिक संरचना है।

1.6 विधि आयोग को सौंपे गए न्यायिक सुधारों के अध्ययन से संबंधित निर्देश के निबन्धनों में आयोग से यह अपेक्षा की गई है कि वह :—"4. अधीनस्थ न्यायालयों/अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्तियों की पद्धति" का परीक्षण करें ।

विधि आयोग ने अपनी कार्य-सूची, अपनी रिपोर्टों की निरन्तरता और परस्पर संबद्धता बनाए रखने की दृष्टि से तैयार की थी । न्याय प्रशासन प्रणाली के विकेन्द्रीकरण करने की दृष्टि से, विधि आयोग ने अपनी रिपोर्ट (विधि आयोग की 114वीं रिपोर्ट) में आधार स्तर पर न्यायालयों का पुनर्गठन किए जाने की अनुशंसित की थी और ग्राम न्यायालय स्थापित किए जाने का सुझाव दिया था । उसमें अनुशंसित न्याय प्रशासन के लिए सहभागी न्यायाधिकरण (participatory forum) के लिए अधीनस्थ न्यायपालिका का पुनर्गठन करने की आवश्यकता होगी जिसका प्रभाव अधीनस्थ न्यायालयों पर पड़ेगा—जिसे पुनः आधार स्तरीय न्यायालय कहा जा सकता है । अगला ऊर्ध्वस्थ प्रक्रम जिला न्यायालय का है जिसकी अध्यक्षता जिला न्यायाधीश द्वारा की जाती है । विधि अयोग से अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के निर्माण के प्रश्न में अध्ययन करने, उसका परीक्षण करने और उस पर अपनी राय व्यक्त करने की अपेक्षा की गई थी। तदनुसार, अगले कदम के रूप में, आयोग द्वारा वह कार्यवाही भी की गई और एक विस्तृत रिपोर्ट (विधि आयोग की 118वीं रिपोर्ट) सरकार को भेजी गई है जिसमें अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के गठन और उसकी स्थापना करने की अनुशंसा की गई है । यह शीघ्र ही स्पष्ट होगा कि इस पर भी ग्राम न्यायालय और जिला न्यायाधीश के बीच अधीनस्थ न्यायालय रहेंगे जिसमें अधीनस्थ न्यायपालिका के व्यक्ति रहेंगे । अनुच्छेद 312 द्वारा अधिरोपित बाध्यताओं को दृष्टिगत रखते हुए, विधि आयोग द्वारा अनुशंसित अखिल भारतीय न्यायिक सेवा, जिला न्यायाधीश के, जिस रूप में कि वह पद संविधान के अनुच्छेद 236 में समझा जाता है, स्तर पर स्थापित की जा सकती है। अखिल भारतीय न्यायिक सेवा में, जिसे उस रिपोर्ट में "भारतीय न्यायिक सेवा" के नाम से उल्लिखित किया गया है, तीन स्वतंत्र स्रोतों से भरती किए गए कार्मिक रखे जाएंगे, ऐसा एक स्रोत राज्य न्यायिक सेवा है । अतः भारतीय न्यायिक सेवा वैज्ञानिक ढंग से गठन करने की दृष्टि से यह अनिवार्य है कि उस दशा में जबकि अखिल भारतीय सेवा में पदोन्नति राष्ट्रीय स्तर पर होती है, राज्य न्यायिक सेवा का पुनर्गठन किया जाए और प्रोन्नति के लिए विचार क्षेत्र में आने वाली सभी इकाइयों को अधिकाधिक समान स्तर पर रखा जाए । अधीनस्थ न्यायालयों/अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्ति की पद्धति का परीक्षण करने का अतिरिक्त बाध्यकर कारण यह है कि वह भारतीय न्यायिक सेवा में के 40% पदों के लिए पुनर्निवेश की व्यवस्था करेगी । भारतीय न्यायिक सेवा, अखिल भारतीय स्तर पर गठित की जानी है।

जिला स्तर पर जिला तथा सेशन न्यायाधीश का न्यायालय आरंभिक अधिकारिता वाला प्रधान न्यायालय है और उसकी अध्यक्षता जिला तथा सेशन न्यायाधीश के नाम से जाने जाने वाले अधिकारी द्वारा की जाती है। पदाभिधान जिला न्यायालय, सिविल प्रक्रिया संहिता से लिया गया है और सेशन न्यायाधीश, दण्ड प्रक्रिया संहिता से। नियमतः दोनों ही कानूनों के अधीन की शक्तियों से विनिहित किया गया अधिकारी जिला तथा सेशन न्यायालय नामक न्यायालय की अध्यक्षता करता है।

1.3 राज्य स्तर पर न्यायालयों की स्तूपाकार संरचना में अगला अधिश्रेणिक प्रक्रम पर उच्च न्यायालय है जो संविधान के अनुच्छेद 214 के अधीन स्थापित किया गया सर्वोच्च न्यायालय है। भारत का उच्चतम न्यायालय राष्ट्रीय स्तर पर शीर्षस्थ न्यायालय है। इसका चित्रण उपाबंध 1 में दिए गए आरेख से किया जा सकता है जो स्वयं स्पष्ट है।

1.4 इसमें अंकित न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय कहलाते हैं जैसा कि वह पद संविधान के अनुच्छेद 236 में, जो निम्नानुसार है, समझा जाता है :

'236. इस अध्याय में,—

(क) "जिला न्यायाधीश" पद के अन्तर्गत नगर सिविल न्यायालय का न्यायाधीश, अपर जिला न्यायाधीश, संयुक्त जिला न्यायाधीश, सहायक जिला न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, मुख्य प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट, अपर मुख्य प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट, सेशन न्यायाधीश, अपर सेशन न्यायाधीश और सहायक सेशन न्यायाधीश हैं;

(ख) "न्यायिक सेवा" पद से ऐसी सेवा अभिप्रेत है जो अनन्यतः व्यक्तियों से मिल-कर बनती है, जिनके द्वारा जिला न्यायाधीश के पद का और जिला न्यायाधीश के पद से अवर अन्य सिविल न्यायिक पदों का भरा जाना आशयित है।'

न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले पदधारी प्रदत्त शक्तियों के अनुसार सिविल प्रकृति या दाण्डिक प्रकृति के विवादों के संबंध में कार्रवाई करते हैं। वह द्वैध संगठन वाले अमरिकी माडल—परिसंघीय न्यायपालिका और राजकीय न्यायपालिका—से भिन्न एक सामान्य ऊर्ध्वस्थ और अधिश्रेणिक अधीनस्थ न्यायालय/अधीनस्थ न्यायपालिका है।

1.5 न्यायालयों के नाम तथा न्यायालयों के भारसाधक पदधारियों के पदाभिधान, सिविल तथा दांडिक प्रक्रिया विहित करने वाले उन कानूनों के, जो न्यायालयों की स्थापना का उपबंध करते हैं, विभिन्न उपबंधों के प्रति निर्देश्य कृत्यों को विनिर्दिष्ट करते हैं। उदाहरण की तौर पर, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 6 यह उपबंध करती है कि उच्च न्यायालयों तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता से भिन्न किसी विधि के अधीन गठित न्यायालयों के अतिरिक्त, प्रत्येक राज्य में निम्नलिखित वर्गों के दाण्डिक न्यायालय होंगे :—

(एक) सेशन न्यायालय ;

(दो) प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट और किसी महानगर क्षेत्र में, महानगर मजिस्ट्रेट ;

(तीन) द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट ;

(चार) कार्यपालक मजिस्ट्रेट।

इसी प्रकार, सिविल प्रकिया संहिता की धारा 3 में जिला न्यायालय को उच्च न्यायालय के अधीनस्थ प्रधान न्यायालय के रूप में स्थापित किया जाना परिकल्पित है। जिला न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालय स्थापित करने के लिए, प्रत्येक राज्य ने अपनी स्वयं की विधि अधि-नियमित की है और उन्हें इसमें इसके पूर्व दर्शाए गए अनुसार विभिन्न नामों से वर्णित किया गया है। मामूली तौर से, जिला न्यायालय को, प्रत्येक राज्य में प्रशासन की इकाई के रूप

अध्याय 2

अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती

2.1 संविधान के भाग 6 का अध्याय 6 अधीनस्थ न्यायपालिका से संबंधित है। अनुच्छेद 233 में यह उपबंध किया गया है कि किसी राज्य में जिला न्यायाधीश होने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति तथा जिला न्यायाधीश की तैनाती और पदोन्नति उस राज्य का राज्यपाल ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके करेगा। अनुच्छेद 233 के उप-अनुच्छेद (2) में यह उपबंध है कि कोई ऐसा व्यक्ति, जो पहले से ही संघ की या राज्य की सेवा में न हो, जिला न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए केवल तभी पात्र होगा जब वह कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता या प्लीडर रहा हो और उसकी नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय ने सिफारिश की हो। अनुच्छेद 234 में जिला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की न्यायिक सेवा में नियुक्ति के लिए उपबंध है। किसी राज्य की न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की नियुक्तियां उस राज्य के राज्यपाल द्वारा, राज्य लोक सेवा आयोग से ऐसे राज्य (राज्यों) के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात्, उन नियमों के अनुसार की जाएंगी जो उसके द्वारा उस निमित्त बनाए गए हों। अनुच्छेद 235 में यह उपबंध है कि जिला न्यायालयों और उसके अधीनस्थ न्यायालयों का नियंत्रण, जिसके अन्तर्गत राज्य की न्यायिक सेवा के व्यक्तियों और जिला न्यायाधीश के पद से कोई अवर पद धारण करने वाले व्यक्तियों की तैनाती, प्रोन्नति और उनको छुट्टी देना है, उच्च न्यायालय में निहित होगा। इन अनुच्छेदों के दिग्दर्शन से यह ज्ञात होता है कि अधीनस्थ न्यायपालिका में जिला न्यायाधीश और जिला न्यायाधीश से भिन्न और उसके अधीनस्थ व्यक्ति होंगे। जिला न्यायाधीश के संवर्ग में दो स्रोतों अर्थात् अधीनस्थ न्यायपालिका से प्रोन्नति और बार से सीधी भरती द्वारा भरती की जा सकती है। अधीनस्थ न्यायपालिका से प्रोन्नति के विषय में, राज्यपाल को यह शक्ति प्रदत्त की गई है कि वह उसके संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके प्रोन्नति करे। बार से भरती के विषय में, उच्च न्यायालय से परामर्श करके नियुक्ति की जा सकती है। इस प्रकार, जिला न्यायाधीश के संवर्ग में नियुक्ति के विषय में उच्च न्यायालय की राय प्रमुख है, जबकि नियुक्तियां करने की शक्ति सरकार में निहित है।

नियुक्ति की शक्ति

2.2 राज्य की न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीश से भिन्न व्यक्तियों की भरती के विषय में, नियुक्तियां करने की शक्ति राज्यपाल को प्रदत्त की गई है जिसका प्रयोग वह राज्य लोक सेवा आयोग से और ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात्, उन नियमों के अनुसार करता है जो उसके द्वारा उस निमित्त बनाए गए हों। यद्यपि एक समय पर, यहा शंका अभिव्यक्त की गई थी कि क्या नियम बनाने के विषय में या नियुक्तियां करने के विषय में, अनुच्छेद 234 में परिकल्पित किए गए अनुसार राज्य लोक सेवा आयोग और उच्च न्यायालय से, नियम बनाने के संबंध में या नियुक्तियां करने के संबंध में परामर्श करना आवश्यक था। सुस्थापित मत यह है कि राज्यपाल, राज्य लोक सेवा आयोग और उस पर अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके नियम बनाएगा। अनुच्छेद 234 द्वारा प्रदत्त शक्तियों को प्रयोग में लाते हुए, प्रत्येक राज्य ने राज्य न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीश से भिन्न व्यक्तियों की भरती के लिए नियम बनाए हैं। ये नियम स्थूल रूप से प्रवेश की आयु, शैक्षणिक अर्हताएं, बार में विधि व्यवसाय, यदि कोई हो, आदि अधिकथित करते हैं। उस स्थिति को छोड़कर जिसमें भरती प्रोन्नति द्वारा की जाती है, राज्य लोक सेवा आयोग उच्च न्यायालय से, संवर्ग में विद्यमान तथा निकट भविष्य में संभावित रिक्तियों के संबंध में प्राप्त मांग पत्र के अनुसार भरती का कार्यक्रम बनाता है। राज्य लोक

2—1 Mof/L & J/87

यदि पुनर्निवेश भारतीय न्यायिक सेवा में प्रोन्नति के रूप में राज्यों से होता है तो यह अनिवार्य है कि चयन का क्षेत्र सर्वनिष्ठ अपवर्त्य (common denomination) पर लाया जाना चाहिए । तदनुसार, इस तथ्य के सिवाय कि भारत सरकार ने अपने द्वारा तैयार किए गए निर्देश-निबंधनों में यह चाहा है कि विधि आयोग एकमुश्त न्यायिक सुधारों के, जिसमें भारतीय न्यायिक सेवा की स्थापना सम्मिलित है, अधीनस्थ न्यायालयों/अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्तियों की पद्धति का परीक्षण करे, विभिन्न राज्यों में अधीनस्थ न्यायपालिका की वर्तमान गठन का बारीकी से अवलोकन करना अपरिहार्य है ताकि उसे सर्वनिष्ठ अपवर्त्य पर लाया जा सके और वह भारतीय न्यायिक सेवा में लगभग समान व्यक्तियों में से पुनर्निवेश उपलब्ध करा सके । यह वर्तमान रिपोर्ट का मुख्य प्रयोजन है ।

में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की शामिला की व्यवस्था नहीं करते। यह भी अविदित नहीं है कि जब किसी न्यायाधीश को बुलाया जाता है तब उसके द्वारा व्यक्त की गई राय को, उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए इस निदेश का अनुपालन किए बिना ही उपेक्षित कर दिया जाता है कि जब विशेषज्ञ न्यायाधीश द्वारा दी गई राय को नहीं माना जाता तब लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों को, जिनसे मिलकर चयन समिति गठित हुई है, विशेषज्ञ न्यायाधीश की राय न मानने के संबंध में कारण अभिलेखबद्ध करना चाहिए। यह चिन्ता का विषय है कि अधीनस्थ राज्य की न्यायिक सेवा में भरती के लिए अभ्यर्थियों के चयन के विषय में क्या अभी वह समय नहीं आया है जब राज्य के या संघ के लोक सेवा आयोग को पूरी तरह अपवर्जित कर दिया जाए। विधि आयोग अपनी ठीक आगामी रिपोर्ट में इस पहलू पर विचार करने जा रहा है।

भरती की पद्धति

2.4. अधिकांश राज्यों में––19 राज्यों में से 14 में––अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती से संबंधित जिनके नियमों का विधि आयोग ने विश्लेषण किया है, अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती के लिए अभ्यर्थियों का चयन लिखित और मौखिक परीक्षा के संयुक्त परिणाम के आधार पर किया जाता है। असम और पंजाब राज्यों में मौखिक परीक्षा की व्यवस्था नहीं की गई है और चयन लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित लिखित परीक्षा के परिणाम के आधार पर किया जाता है। प्रतिबिम्ब के दूसरे छोर पर, महाराष्ट्र और गुजरात में लिखित परीक्षा आयोजित करने का कोई प्रावधान नहीं है और अभ्यर्थियों का चयन केवल मौखिक परीक्षा के आधार पर किया जाता है। इस संबंध में, विभिन्न राज्यों द्वारा अपनाई गई भरती की पद्धतियों के संबंध में दृष्टिकोण की भिन्नता पर प्रकाश डालना आवश्यक है। कुछ राज्यों में सीधी भरती और राज्य सेवा के अन्य विभागों से स्थानान्तरण द्वारा या परीक्षाओं का आयोजन करके जो कि केवल राज्य सरकारों के विभागीय अभ्यर्थियों के लिए उपलब्ध है, भरती की व्यवस्था की गई है। स्थानान्तरण द्वारा भरती की पद्धति में अनेक दुष्परिणाम अन्तर्निहित हैं। वह अत्यधिक गर्हित सिद्ध हुई है। भरती की सांविधानिक पद्धति की सर्वथा अवहेलना करने वाला एक गंभीर मामला जो विधि आयोग की जानकारी में आया है, वह तमिलनाडु का है। वर्तमान में जितनी प्रामाणिक जानकारी मिल सकती है उसके अनुसार तमिल नाडु में मुंसिफ मजिस्ट्रेट के 260 पदों पर ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती नहीं किया गया है वरन् वे अन्य विभागों के तदर्थ अन्तरिती हैं। वास्तव में, सांविधानिक आदेश की इस घोर अवहेलना और पृथक्कृत कार्यपालिका और न्यायपालिका के प्रच्छन्न पुनर्एकीकरण में तमिलनाडु में विधि वृत्ति करने वाले व्यक्तियों के मानस को इतना आंदोलित कर दिया कि बार के सदस्यों ने अधीनस्थ न्यायपालिका में नियमों के अनुसार भरती करने की असफलता पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए एक लम्बी अवधि तक हड़ताल की। इसी प्रकार, पंजाब और हरियाणा राज्यों में नियम यह अनुज्ञात करते हैं कि सिविल सेवा (कार्यपालक शाखा) के सदस्यों को स्थानान्तरण द्वारा अधीनस्थ न्यायाधीश नियुक्त किया जा सकेगा, यद्यपि ऐसे अन्तरिती अधीनस्थ न्यायाधीश के रूप में भरती के लिए अनिवार्य न्यूनतम अर्हताएं नहीं रखते। भरती के लिए विहित किए गए सिद्धान्तों के घोर अतिक्रमण का यह एक दूसरा उदाहरण है। वास्तव में, ये वे विभिन्न युक्तियां हैं जिनके द्वारा संविधान के अनुच्छेद 50 द्वारा यथा आदेशित प्रथक्कृत कार्यपालिका और न्यायपालिका को पुनः संयुक्त किए जाने का प्रयत्न किया जाता है। चार राज्यों के भरती नियमों में, आपात भरती के लिए उपबंध किया गया है जिसमें कि विनिर्दिष्ट अपेक्षाओं और अनिवार्य अर्हताओं की अवहेलना सुरक्षा के साथ की जा सकती है। यह समझ में नहीं आता कि अधीनस्थ न्यायिक सेवा में भरती के विषय में आपात स्थिति कैसे उत्पन्न हो सकती है। आवश्यकताओं का, उनको सम्मिलित करते हुए जो कि संख्या के पुनरीक्षण के परिणामस्वरूप उद्भूत हुई हों, सदैव पहले से ही पूर्व आकलन किया जा सकता है और यदि इस बीच, राज्य के उच्च न्यायालय को, प्रक्रिया में ऐसा परिवर्तन करके जिससे कि, अत्यधिक जनाकीर्ण विधि वृत्ति को दृष्टिगत रखते हुए, सभी संबंधित व्यक्तियों को उसके लिए प्रतियोगी होने का समान अवसर प्राप्त हो सके, बाजार से भरती करने का कर्तव्य

सेवा आयोग न्यूनतम अर्हताएं तथा अन्य अपेक्षाएं वर्णित करते हुए, विज्ञापन निकालकर आवेदन आमंत्रित करता है। कुछ राज्य, राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित की जाने वाली लिखित परीक्षा और/या मौखिक परीक्षा का आयोजन करते हैं। कुछ अन्य राज्य, राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्यों द्वारा मौखिक परीक्षा का आयोजन करते हैं। कुछ राज्य, मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने वाले उच्च न्यायालय के आसीन न्यायाधीश को मौखिक परीक्षा में विशेषज्ञ के रूप में भाग लेने के लिए बुलाते हैं। किन्तु, जबकि वह अपनी राय अभिलिखित कर सकता है, वह निर्णयन प्रक्रिया में भाग लेने या प्रत्येक अभ्यर्थी के निष्पादन का मूल्यांकन करके, अंक देने का हकदार नहीं होता। लोक सेवा आयोग उन अभ्यर्थियों की सूची भेजता है जिनकी सिफारिश नियुक्ति के लिए पात्र होने के रूप में उसके द्वारा की जाती है। राज्य सरकार सूची में से नियुक्तियां करती है। भिन्न-भिन्न राज्यों में तद्विषयक सुसंगत नियमों में अन्तर है। प्रत्येक राज्य में, नियमों की स्थूल अपेक्षाएं दर्शाने वाली सारणी, जैसी कि वह विधि आयोग को उपलब्ध कराई गई है और जिसमें विस्तृत जानकारी दी गई है, उपाबंध 2 में समाविष्ट है।

भरती के लिए अभिकरण

2.3 सांविधानिक उपबंध के अनुरूप, अधिकांश राज्यों ने अधीनस्थ न्यायपालिका के लिए अपने-अपने नियमों में, अधीनस्थ न्यायपालिका के पदों के लिए अभ्यर्थियों का चयन और सिफारिश करने की शक्ति राज्य लोक सेवा आयोग को उस दशा में प्रदत्त की है जबकि भरती खुले बाजार से की जानी हो। चूंकि अधीनस्थ न्यायपालिका में एक अधिश्रेणी है, अतः किसी व्यक्ति के जिला न्यायाधीश के पद पर ऊर्ध्वतः पहुंचने के पहले, अधीनस्थ न्यायालय में ऐसे पद हैं जिन पर नियुक्ति प्रोन्नति द्वारा की जा सकती है। इस प्रकार, जहां भरती, प्रोन्नति द्वारा की जाती है, वहां सिफारिश करने की शक्ति केवल उच्च न्यायालय को प्रदत्त है, भले ही नियुक्ति करने की शक्ति राज्यपाल में निहित क्यों न हो। कर्नाटक राज्य ने इस संबंध में साहसपूर्ण नई पद्धति अपनाई है। अधीनस्थ न्यायपालिका के पदों के लिए बाजार से भरती के विषय में भी, कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा गठित उच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की समिति लिखित और मौखिक परीक्षा दोनों ही की व्यवस्था करती है। नियुक्तियां समिति द्वारा तैयार की गई योग्यताक्रम सूची के अनुसार राज्यपाल द्वारा की जाती हैं। इस संबंध में आसाम से प्राप्त जानकारी संक्षिप्त है। विधि आयोग को जो भी जानकारी उपलब्ध कराई गई है, उससे प्रतीत होता है कि अधीनस्थ न्यायपालिका में श्रेणी 3 के लिए भरती दो स्रोतों से की जाती है। इस संबंध में भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए सुसंगत विचारों की ओर ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है जो अधीनस्थ न्यायिक सेवा के लिए भरती के लिए अभ्यर्थियों के चयन में उच्च न्यायालय के आसीन न्यायाधीश की भागिता के प्रश्न से सीधे संबंधित है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने यह सिफारिश की है कि जब न्यायिक सेवा के लिए चयन किया जा रहा हो तब राज्य के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नाम-निर्दिष्ट किए जाने वाले आसीन न्यायाधीश को साक्षात्कार में विशेषज्ञ की हैसियत से भाग लेने के लिए बुलाया जाना चाहिए और चूंकि ऐसा आसीन न्यायाधीश, विशेषज्ञ की हैसियत से आता है और उसे उच्च न्यायालय का आसीन न्यायाधीश होने के कारण उन अभ्यर्थियों की, जो साक्षात्कार के लिए उपस्थित होते हैं, गुणवत्ता और चरित्र का ज्ञान होता है, अतः उसके द्वारा दी गई सलाह, जब तक कि ऐसी सलाह को न मानने के सबल और विश्वसनीय कारण न हों, जिन्हें कि लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों द्वारा अभिलेखबद्ध किया जाना चाहिए, मामूली तौर से मान ली जानी चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने प्रत्येक राज्य के लोक सेवा आयोग को यह निदेश दिया है कि न्यायिक सेवा में सर्वोत्कृष्ट प्रतिभावान व्यक्तियों को भरती किया जाना चाहिए और वह वास्तविक तभी सुनिश्चित हो सकता है जबकि वास्तविक रूप से विशेषज्ञ (उच्च न्यायालय का आसीन न्यायाधीश) को रखा जाए, चयन प्रक्रिया में जिसकी सलाह अवधारक कारक होती है। [1]इस आज्ञापक निदेश के बावजूद भी, यह सर्व विदित है कि कुछेक राज्य लोक सेवा आयोग, न्यायिक सेवा में भरती के लिए अभ्यर्थियों के चयन

1. अशोक कुमार यादव विरुद्ध हरियाणा राज्य (1985) 4, एस० सी० सी० 417।

कम से कम एक राज्य में, तीसरी भाषा के ज्ञान को भी विहित करने की शक्ति संबंधित प्राधिकरण को प्रदत्त की गई है।

निरर्हताएं

2.7. अधिकांश राज्यों ने सुनिश्चित निरर्हताएं विहित की हैं जो इच्छुक अभ्यर्थियों को अधीनस्थ न्यायिक सेवा में प्रवेश के लिए अपात्र बनाती हैं। उनका ब्यौरेवार उल्लेख करना आवश्यक नहीं है, सिवाय यह कहने कि अभी हाल ही में भारत के उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि विगत राजनैतिक सम्बद्धताएं स्वकारेण किसी व्यक्ति को सेवा में प्रवेश से निरर्हित नहीं करतीं, यदि वह अन्यथा अर्हित हो।

मध्यप्रदेश राज्य विरुद्ध रामशंकर रघुवंशी और एक अन्य (1953) 2 एस० सी० सी० 145.।

सौंप दिया जाता है तो भरती आसानी से और सुविधापूर्वक समय सीमा के भीतर की जा सकती है। आपात की परिकल्पना तक नहीं की जा सकती। वास्तव में यह न्यायपालिका में नियुक्ति के विषय में एक अन्य संशयपूर्ण युक्ति है। तमिलनाडु और केरल में सिविल न्यायिक पदों और मजिस्ट्रेट के पदों पर भरती के लिए नियमों के दो पृथक्-पृथक् वर्ग हैं, यद्यपि दोनों ही प्रकार के पद उच्च न्यायालय के प्रशासनिक और न्यायिक नियंत्रण में हैं। विधि आयोग को केरल उच्च न्यायालय द्वारा सूचित किया गया है कि राज्य में न्यायपालिका के सिविल और दाण्डिक दोनों पक्षों को एकीकृत करने के उपाय किए जा रहे हैं।

पात्रता मापदण्ड

2.5. अधीनस्थ न्यायपालिका में प्रवेश के लिए विधि का ज्ञान और न्यायालयों के कार्यकरण का व्यावहारिक अनुभव प्राथमिक शर्त है। तदनुसार, राज्य न्यायिक सेवा में प्रवेश के लिए प्रतियोगी होने के लिए पात्र होने हेतु आवश्यक योग्यताएं विहित करने वाले पात्रता मापदण्ड पर तीन पृथक् प्रमुख आवश्यकताओं के अधीन विचार किया जा सकता है :—

(क) **शैक्षणिक अर्हताएं :**—शैक्षणिक अर्हताओं के रूप में विधि की उपाधि स्पष्टतः एक अनिवार्य आवश्यकता है। राज्यों के नियमों में साधारणतः उसका प्रावधान किया गया है किन्तु कुछ निराशाजनक क्षेत्र भी हैं। जहां स्थानान्तरण द्वारा नियुक्ति अनुज्ञात है, वहां यह सुनिश्चित नहीं किया जाता कि अन्तरिती के पास विधि की उपाधि है। कुछ राज्यों में, बार में कतिपय कालावधि के लिए विधि व्यवसाय को अपेक्षा के रूप में कथित किया जाता है। इससे यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि अभ्यर्थी के पास विधि की उपाधि है क्योंकि विधिज्ञ परिषद् किसी को भी तब तक अधिवक्ता के रूप में नामांकित नहीं करेगी जब तक कि उसके पास भारत की विधिज्ञ द्वारा मान्यताप्राप्त विधि की उपाधि न हो।

(ख) **आयु :**—अधिकांश राज्यों के भरती नियमों में अधीनस्थ न्यायपालिका में भरती के लिए न्यूनतम और अधिकतम आयु का उपबंध, समाज के कमजोर वर्गों के लिए शिथिलीकरण के उपबंध के साथ किया गया है। यह 21 वर्ष से 45 वर्ष के बीच घटती बढ़ती है। सीधी भरती और स्थानान्तरण द्वारा भरती किए जाने वाले व्यक्तियों की आयु में भी अन्तर है। कुछ राज्यों में सीधे भरती किए जाने वाले व्यक्तियों के लिए 21-38 आयु समूह का उपबंध किया गया है जबकि स्थानान्तरण द्वारा भरती किए जाने वाले व्यक्तियों के लिए उच्च आयु सीमा 45 वर्ष तक बढ़ाए जाने का उपबंध है। आन्ध्र प्रदेश, केरल, राजस्थान और तमिलनाडु राज्यों में न्यूनतम आयु के लिए कोई उपबंध नहीं किया गया है। एक राज्य से दूसरे राज्य में न्यूनतम आयु का अन्तर, भरती नियमों में अधिकथित कतिपय कालावधि के लिए बार में विधि व्यवसाय का उपबंध करने वाली अन्य अपेक्षाओं से संबंधित है। विधि व्यवसाय की जितनी लंबी अवधि विहित की जाती है उतनी ही ऊंची आयु सीमा निर्धारित की जाती है।

(ग) **अनुभव :**—जैसा ठीक पूर्व में, बताया गया है, विधि व्यवसाय की अवधि 1 वर्ष से 5 वर्ष के बीच होती है। तथापि, हमें असम राज्य से इस प्रश्न पर प्रामाणिक जानकारी नहीं मिली है कि क्या उन अभ्यर्थियों के लिए, जो राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जाने वाली प्रतियोगी परीक्षा में बैठते हैं, किसी विशिष्ट अवधि के लिए बार में विधि व्यवसाय, ऐसी परीक्षा में बैठने की प्राथमिक शर्त के रूप में अपेक्षित है।

भाषा

2.6. हाल ही के समय में स्थानीय भाषा के ज्ञान का महत्व बहुत बढ़ गया है, अधिकांशतः यह राजभाषा अधिनियम की धारा 2 और दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 272 और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 137 के कारण है। ग्यारह राज्यों ने स्थानीय भाषा के ज्ञान को अनिवार्य अर्हता के रूप में विहित किया है। कुछ राज्यों के नियमों में, एक या अधिक भाषाओं में प्रवीणता अपेक्षित करने वाला उपबंध किया गया है।

स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए परिकल्पित है, जिससे कि वे अपने न्यायिक कर्तव्यों के निर्वहन में किसी बाहरी प्रभाव से मुक्त रह सकें। उच्च न्यायालय में निहित जिला न्यायालयों तथा उसके अधीनस्थ न्यायालयों पर के नियंत्रण को, जिसके अन्तर्गत राज्य की न्यायिक सेवा के व्यक्तियों की तैनाती और प्रोन्नति तथा उन्हें छुट्टी की मंजूरी भी है, उच्चतम न्यायालय के अनेकों विनिश्चयों द्वारा अधीनस्थ न्यायपालिका को किसी बाहरी दबाव या हस्तक्षेप से अपधारित करते हुए, सर्वव्यापी बना दिया गया है। नियंत्रण की सर्वव्यापकता का विधि आयोग द्वारा विशदता से वर्णन किया गया है।[1] इस प्रभावी नियंत्रण को बनाए रखा जाना है और उसे व्यापक लोकहित और न्यायपालिका की स्वतंत्रता के हित में, जिसे हमारे संविधान का[2] प्रमुख लक्षण ठहराया गया है, प्रतिसंकुचित नहीं किया जाना चाहिए।

4.4. प्रथम विधि आयोग ने न्यायिक प्रशासन के सभी पहलुओं के पुनर्विलोकन का कार्य इस दृष्टि से हाथ में लिया कि जिससे उसके सुधार के लिए उपाय एवं साधन सुझाए जा सकें और उसे द्रुतगामी और कम खर्चीला बनाया जा सके। उसके मत में, जिले में जिला और सेशन न्यायाधीश उच्चतम प्राधिकारी है और वह उसके न्यायिक प्रशासन के सभी पहलुओं के लिए उत्तरदायी है। सामान्यतः मुंसिफ के रूप में भरती किए गए दस व्यक्तियों में से केवल एक व्यक्ति इस चयन पद पर पहुंचने की आकांक्षा कर सकता है। विधि आयोग की सिफारिशों को दृष्टिगत रखते हुए, जिला न्यायाधीश का पद, उन पदों को सम्मिलित करते हुए जो पद "जिला न्यायाधीश" में समाविष्ट की जाती हैं, जो अनुच्छेद 236 में उपवर्णित हैं, भारतीय न्यायिक सेवा में सम्मिलित हो जाएगा। अतः राज्य न्यायिक सेवा में जैसा कि अनुच्छेद 236 से समझा जाता है, जिला न्यायाधीश के संवर्ग से निम्न पद और संवर्ग समाविष्ट होंगे। उसने ऐसे पदों के लिए, एक-समान पदाभिधानों की और भरती के लिए राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित किए जाने वाली लिखित परीक्षा की सिफारिश की। यह अपरिहार्य प्रतीत होता है कि राज्य न्यायिक सेवा का संगठन करने के लिए, एक-समान पदाभिधान की योजना बनानी पड़ेगी।

4.5. जो स्थिति वर्तमान में है, कतिपय राज्यों ने उदाहरणार्थ महाराष्ट्र, अपनी राज्य न्यायिक सेवा को वरिष्ठ शाखा और कनिष्ठ शाखा के रूप में अभिहित शाखाओं में विभाजित किया है। कुछ राज्यों, जैसे राजस्थान ने राज्य न्यायिक सेवा को निम्न सेवा और उच्च सेवा में उपविभाजित किया है। इस संबंध में, प्रथम विधि आयोग की सिफारिश, तीन दशक बीत जाने पर भी पूरी तरह उचित है और उसे अंगीकार करना उचित होगा। राज्य न्यायिक सेवा को राज्य न्यायिक सेवा वर्ग 1 और वर्ग 2 की संज्ञा दी जानी चाहिए। एक-समान पदाभिधानों की व्यवस्था हो जाने पर, यह अवधारित करना आवश्यक होगा कि किस विशिष्ट पद के धारकों को वर्ग 2 में समाविष्ट किया जाएगा और किनको वर्ग 1 में। इतना कहना पर्याप्त है कि प्रथम विधि आयोग का यह विचार कि जिला न्यायाधीश राज्य न्यायिक सेवा वर्ग 1 का होना चाहिए, भारतीय न्यायिक सेवा के निर्माण की सिफारिश को[3] दृष्टिगत रखते हुए मान्य नहीं रहेगा। कोई अन्य दृष्टिकोण, इन दो रिपोर्टों में विसंगति पैदा करेगा जिससे किसी भी कीमत पर बचा जाना चाहिए। अतः यह सिफारिश की जाती है कि सेवा जिला न्यायाधीश की पदश्रेणी से नीचे की राज्य न्यायिक का संगठन राज्य न्यायिक सेवा वर्ग 1 और वर्ग 2 के रूप में किया जाना चाहिए।

4.6. प्रथम विधि आयोग की यह सिफारिश उचित है कि न्यायिक अधिकारियों द्वारा, यद्यपि उन्हें भिन्न-भिन्न नामों से पदाभिहित किया गया है, सम्पादित किए जाने वाले एक से कृत्यों को देखते हुए, पदाभिधानों की एकरूपता का लक्ष्य रखना उचित होगा। विभिन्न पदाभिधानों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ने न केवल अपनी मान्यता खो दी है वरन् प्रसंगिकता भी।

---

1. भारत के विधि आयोग की 116वीं रिपोर्ट पृ. 2, अपशीर्षक (सी)।
2. शमसेर सिंग बिरुद्ध पंजाब राज्य (1974) 2 एस०सी०सी० 831।
3. भारत का विधि आयोग, 116वीं रिपोर्ट।

अध्याय 4

अधीनस्थ न्यायपालिका का पुनर्गठन

4.1. अधीनस्थ न्यायपालिका के संगठन के विषय में, विधि आयोग नए सिरे से नहीं लिख रहा है। अधीनस्थ न्यायपालिका के संबंध में कार्यवाही करने के लिए विगत समय में किए गए प्रयास का सिलसिला संयुक्त संसदीय समिति की रिपोर्ट से प्रारंभ हुआ था जिसमें अधीनस्थ न्यायपालिका की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के प्रश्न पर विचार किया गया था। सुसंगत विचारों को निम्नानुसार उद्धृत किया जा सकता है[1] :—

"यह विषय श्वेत पत्र में वर्णित नहीं है किन्तु उसके कुछ ऐसे पहलू हैं जो हमें इतने महत्वपूर्ण प्रतीत होते हैं कि हम उनके संबंध में अपनी राय कथित करना उचित समझतें हैं। संघीय न्यायाधीशों और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति क्राउन द्वारा की जाएगी और उनकी स्वतंत्रता सुनिश्चित है, किन्तु अधीनस्थ न्यायपालिका में नियुक्तियां आवश्यक रूप से भारत में के ऐसे प्राधिकारियों द्वारा की जानी चाहिए जो न्यायाधीशों पर, उनकी नियुक्ति के पश्चात् कुछ हद तक नियंत्रण का प्रयोग भी करेंगे, विशेषतः प्रोन्नति और तैनाती के विषय में। हमारे ऊपर उन कुचेष्टाओं का बहुत असर पड़ा है जो उस पद्धति के कारण अन्यत्र घटित हुई हैं जिसमें न्यायिक अधिश्रेणी में एक श्रेणी से दूसरी श्रेणी में प्रोन्नति मंत्री के हाथ में होती है, जो जनता द्वारा चुनी गई विधायिका के दबाव में रहता है। मजिस्ट्रेट की स्वतंत्रता समाप्त होने की जितनी संभावना इस बोध से है कि उसका प्रगतिक्रम मंत्री के अनुग्रह पर आश्रित है उतनी किसी और से नहीं। भारत में अधीनस्थ न्यायपालिका ही ऐसी है जो जनता के सर्वाधिक निकट सम्पर्क में लाई गई है और यह कम महत्वपूर्ण नहीं है, कदाचित वास्तव में यह बहुत महत्वपूर्ण है कि उसकी स्वतंत्रता वरिष्ठ न्यायाधीशों की अपेक्षा अधिक प्रश्नातीत रखी जाना चाहिए।"

4.2. यह दृष्टिकोण भारत शासन अधिनियम, 1935 में ध्वनित हुआ जो न्यूनाधिक रूप से संविधान के प्रतिष्ठापकों के लिए एक माडल रहा है। इस अधिनियम की धारा 254 में, जिला न्यायाधीश नियुक्त किए जाने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति, तैनाती और प्रोन्नति के लिए उपबंध किया गया था वे अपने व्यक्तिगत विवेक का प्रयोग करने वाले प्रान्त के राज्यपालों द्वारा, उच्च न्यायालय से परामर्श करके की जानी थी। धारा 254 की उपधारा (2) जिला न्यायाधीश के संवर्ग में सीधी भरती का उपबंध करती है। यह सुरक्षापूर्वक कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 233 (1) तथा (2), धारा 251 (1) (2) के समविषयक हैं। उनमें केवल थोड़ा और पारिणामिक अन्तर है। इसी प्रकार, धारा 235, संविधान के अनुच्छेद 234 के समविषयक है। इसके अतिरिक्त, अनुछेद 233, धारा 255 (3) को कुछ गौण स्वरूप के परिवर्तन के साथ पुनः अधिनियमित करती है, सिवाय इसके कि अनुच्छेद 235 जिला न्यायालयों पर भी नियंत्रण उच्च न्यायालय में निहित करता है, जबकि धारा 255 (3) नियंत्रण को अधीनस्थ सिविल न्यायिक सेवा के व्यक्तियों की, जो जिला न्यायाधीश के पद से कोई अवर पद धारण करते हैं, तैनाती और प्रोन्नति तथा छुट्टी की मंजूरी तक ही सीमित रखती है।

4.3. संविधान में, अनुच्छेद 50 के आशय, अर्थात् कार्यपालिका को न्यायपालिका से पृथक् करने की राज्य की बाध्यता, को दृष्टिगत रखते हुए, संविधान के भाग 6, अध्याय 6 में अन्तर्विष्ट उपबंध अधिनियमित किए हैं जो कार्यपालिका से अधीनस्थ न्यायपालिका की

---

1. भारतीय सांविधानिक सुधार के संबंध में संयुक्त समिति की रिपोर्ट (1933-34) खण्ड 1, पृष्ट 201, पैरा 337।

का आरोप लगाया जा सकता है। प्रशासनिक अधिश्रेणी में, कोई वरिष्ट अधिकारी, अवर अधिकारी को उन विषयों के बारे में निदेश दे सकता है जिनके संबंध में उसके द्वारा कार्यवाही की जा रही है। कार्यपालिका के अधिकारियों की अधिश्रेणी में यही मूलभूत अन्तर है। अतः शब्द "अधीनस्थ" के प्रयोग से, जिससे एक की दूसरे के प्रति एक प्रकार की अधीनस्थता का बोध होता है और जिसमें आज्ञाकारिता समादेशक संबंध के समान किसी संबंध का कोई संकेत निहित हो या जिससे कोई ऐसा संकेत उद्भूत हो, यथाशक्य बचा जाना चाहिए। निःसंदेह हम इस तथ्य से अवगत हैं कि संविधान में भी पद "अधीनस्थ न्यायालय" का प्रयोग किया गया है। न्यायालयों की संरचना स्तूपाकार और अधिक्षेणिक स्वरूप की होने के कारण उसे वरिष्ठ न्यायालय के संबंध में कामचलाऊ रूप से अधीनस्थ न्यायालय के रूप में वर्णित किया जा सकता है। किंतु जहां तक न्यायिक अधिकारी के पदाभिधान का संबंध है, उस शब्द के प्रयोग से बचने का हर प्रयत्न किया जाना चाहिए। अतः यह उचित होगा कि प्रवेश संवर्ग के लिए एक-समान पदाभिधान की व्यवस्था की जाए।

4.9. इसके पूर्व दर्शित राज्य स्तरीय न्यायालयों की संरचना के सारणीकरण से यह ज्ञात होगा कि प्रवेश संवर्ग को प्रायः सिविल साइड में मुंसिफ/जिल मुंसिफ और दांडिक साइड में मजिस्ट्रेट या मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग के रूप में पदाभिहित किया गया है। प्रायः छोटे नगरों और ऐसे न्यायालयों में,—जिनमें अपर्याप्त संख्या या कम संख्या में मामले संस्थित होते हैं, पीठासीन अधिकारी दोनों ही हैसियत से—सिविल मामलों में मुंसिफ और दांडिक मामलों में कार्यवाही करने के लिए मजिस्ट्रेट-कार्य करता है। गुजरात और महाराष्ट्र ने प्रवेश संवर्ग के पदाभिधानों को सिविल साइड में सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) और दांडिक साइड में न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग के रूप में परिवर्तित कर दिया है। प्रवेश संवर्ग में, चाहे उसे किसी भी रूप में पदाभिहित किया जाए, बाजार से लिए गए नये व्यक्ति रखे जाते हैं, सिवाय उस स्थिति के जबकि किसी को स्थानान्तरण द्वारा तैनात किया जाता है। तदनुसार, निर्णय प्रक्रिया के संबंध में और अन्य सम्बद्ध विषयों में अनुभव के अभाव को दृष्टिगत रखते हुए, यह उचित समझा जाता है कि उन्हें सिविल साइड में धनीय अधिकारिता और दांडिक साइड में अपराधों की गुरुता के मापदण्ड के आधार पर निर्धारित किए गए कम विवादास्पद और छोटे-छोटे मामलों पर अधिकारिता दी जानी चाहिए। मामूली तौर से, यह अधिकारिता सिविल साइड में विषयवस्तु के 20,000/- रुपए तक के मूल्य तक और दांडिक साइड में तीन वर्ष की सजा और जुर्माने से दण्डनीय अपराधों पर विस्तारित होती है।

4.10. आगामी संवर्ग को, जो प्रवेश संवर्ग के सदस्यों को प्रोन्नति के अवसर उपलब्ध कराता है, भिन्न-भिन्न रूपों में पदाभिहित किया गया है, जैसे महाराष्ट्र और गुजरात में सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) और अधिकांश अन्य राज्यों में अधीनस्थ न्यायाधीश या वरिष्ठ उप न्यायाधीश (Senior Sub-Judge) के रूप में इस स्तर पर, पद का धारक, धनीय अधिकारिता की किसी अधिकतम सीमा के बिना, सिविल मामलों के संबंध में कार्यवाही करता है। दूसरे शब्दों में, इस पद को विवादग्रस्त विषय-वस्तु के धनीय मूल्यांकन के संबंध में असीमित अधिकारिता होती है। इस पद को कभी-कभी मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के पद के साथ संयुक्त कर दिया जाता है जिसे न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग से उच्चतर शक्तियां इस तरह होती हैं कि वह सात वर्ष के कारावास और जुर्माने से दण्डनीय मामलों का विचारण कर सकता है। जब इस पद के धारकों को महानगर क्षेत्रों में तैनात किया जाता है, तब उन्हें महानगर मजिस्ट्रेट के रूप में पदाभिहित किया जाता है और जब उन्हें लघुवाद न्यायालय में तैनात किया जाता है तब उन्हें लघुवाद के न्यायाधीश कहा जाता है। इस रिपोर्ट में कृत्यक पदाभिधानों के संबंध में विचार करना आवश्यक नहीं है जिनका समावेश पद जिला न्यायाधीश में किया जाता है, जैसे न्यायाधीश, नगर सिविल न्यायाधीश, मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट, मुख्य न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय, आदि। वास्तव में, पदाभिधान न्यूनाधिक रूप से इस अर्थ में कृत्यक होने चाहिए कि पदाभिधान से पद के धारकों के कृत्य उपदर्शित होंगे। पुनः कुछ पदाभिधानों का उपबंध प्रक्रियात्मक कानूनों, अर्थात् सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता द्वारा किया गया है। अतः एक-समान पदाभिधानों के साथ राज्य न्यायिक सेवा का

निम्न पदश्रेणियों में के पदधारकों के मन में गरिमा की भावना बैठाने की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि ऐसे पदाभिधानों की व्यवस्था की जाए जिनमें शब्द "अधीनस्थ" या पदाभिधान "मुंसिफ" न हो।

4.7. पद "मुंसिफ" का ऐतिहासिक अस्तित्व है। एक प्रकार से वह भारतीय मूल का है तथापि उसे परशियन शब्दकोश का बताया गया है। उसकी वर्तनी "मुंसिफ" थी और वह 'साम्यपूर्ण' न्यायसंगत; जो न्यायसंगत है उसका विनिश्चय करने वाला, मध्यस्थ, न्यायाधीश'। ब्रिटिश शासन के अधीन इस शब्द का प्रयोग प्रथम या निम्नतम पदश्रेणी के देशी सिविल न्यायाधीश के लिए किया जाता था। यह प्रतीत होता है कि एक अन्य पदाभिधान शेरशाह के शासन काल में निर्मित किया गया था। न्याय प्रशासन के लिए, शेरशाह ने अपने साम्राज्य को 'सरकार' नामक प्रशासनिक इकाइयों के बांटा जिसे पुनः परगना में उपविभाजित किया गया। उसने न्याय प्रशासन को दो शाखाओं, सिविल और दांडिक में विभाजित किया। शिकदार को दांडिक मामलों में न्याय करने की शक्ति से विनिहित किया गया था और मुंसिफ को सिविल मामलों का विचारण करने की शक्ति प्रदान की गई थी। शिकदार-ए-शिकदारान प्रत्येक सरकार में दांडिक न्याय प्रशासन के लिए उत्तरदायी था। इसी प्रकार, सिविल साइड में, मुंसिफ-ए-मुंसिफान, प्रत्येक सरकार में सिविल न्यायप्रशासन का प्रभारी था। प्रशासन की नई विशेषता यह थी कि मुंसिफ-ए-मुंसिफान सर्किट न्यायाधीश था और उसे न्याय प्रशासन के दौरान स्थान-स्थान पर जाना पड़ता था। न्याय लोगों के दरवाजे की सीढ़ियों तक ले जाने की जो वर्तमान पुकार है, उसका उद्भव अधिसम्भाव्यतः इसी से हुआ है। मुंसिफ की भरती उलेमा या फाकिश (Lego: Theo Logians) तक सीमित नहीं था। यह प्रतीत होता है कि मुंसिफ की संथा के विकास के दौरान किसी समय पर, पद धारक पूर्णकालिक नियमित, वैतनिक कर्मचारी नहीं था। पूरा संवर्ग मानसेवी न्यायाधीशों से गठित होता था और उन्हें अपने न्यायिक कृत्यों का निर्वहन करने के लिए कोई पारिश्रमिक नहीं मिलता था। बाद के वर्षों में, यह आशंका होने पर कि मानसेवी न्यायाधीशों की पद्धति का भ्रष्टाचार में लिप्त हो जाना सम्भाव्य है या यह कि वह नियमित प्रतिकर के अभाव में अपने कर्तव्यों का सम्पादन करने में उपेक्षावान हैं, वैतनिक पद्धति प्रचलन में आई। मुंसिफ की संस्था ने न्याय तक पहुंच को आसान और सुलभ बना दिया क्योंकि उसके अभाव में, लोगों को जिले के मुख्यालय तक यात्रा करना पड़ती और उन दिनों यात्रा बहुत धीमी और असुविधाजनक थी। उसने 'सरकार' स्तर पर संकुलता कम करने की मदद दी क्योंकि छोटे मोटे विवाद मुंसिफों द्वारा निपटा दिए जाते थे।[2]

इसके पश्चात, पदाभिधान सदर दीवानी अदालत और फौजदारी अदालत आए। तथापि, मुंसिफ का पदाभिधान कुछ राज्यों में अभी मान्य बना हुआ है।

4.8. न्यायिक अधिश्रेणी में शब्द 'अधीनस्थ' विसंगत प्रतीत होता है। संक्षेप में जब कोई मामला निचले से निचले स्तर पर के सक्षम न्यायालय के समक्ष होता है तो वह, किसी बाह्य या असंगत आधारों से प्रभावित हुए बिना और किसी बाहरी दबाव से, जिसके अन्तर्गत सेवा के उच्च स्तर हैं, सर्वथा मुक्त होकर, उसके संबंध में कार्यवाही करता है। दृष्टान्त के तौर पर, जिला न्यायाधीश भी, यद्यपि वह सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) का प्रशासनिक वरिष्ठ अधिकारी होता है, उस समय जबकि कार्यवाहियां, सिविल न्यायाधीश के समक्ष हैं, हस्तक्षेप नहीं कर सकता, सिवाय उस स्थिति के जबकि वह कोई अपील या पुनरीक्षण-सुनता है। यदि वह उस समय हस्तक्षेप करता है जबकि मामला सिविल न्यायाधीश के हाथ में हो तो उसके विरुद्ध न्यायालय की अवमानना

1. विलियम एच. मोर्ले, दी एडमिनिस्ट्रेशन आफ जस्टिस इन ब्रिटिश इण्डिया, रिप्रिन्ट 1976, पृष्ट 354।
2. वाहिद हुसेन--एडमिनिस्ट्रेशन ऑफ जस्टिस ड्यूरिंग मुसलिम रूल इन इंडिया।
3. एम. पी. जैन--आउटलाइन्स ऑफ इण्डियन लीगल हिस्ट्री, पृष्ट 219-21 ।

अध्याय 5

विचार और समीक्षा

5.1 अधीनस्थ न्यायपालिका के लिए व्यक्तियों के चयन के संबंध में लोक सेवा आयोग की भूमिका के प्रश्न पर वास्तविक विचार-विमर्श केन्द्रित रहा है। किसी भी स्तर पर की न्यायपालिका के लिए व्यक्तियों की भरती हेतु चयन के विषय में न्यायपालिका से भिन्न किसी भी अभिकरण के हस्तक्षेप को न केवल क्रुद्ध दृष्टि से देखा जाता है और उसकी निन्दा की जाती है वरन् उसे न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए खतरा माना गया है। अतः राज्य लोक सेवा आयोगों को अधीनस्थ न्यायपालिका में आधारिक स्तर पर प्रवेश के लिए व्यक्तियों के चयन के विषय में यद्यपि निश्चयात्मक भूमिका दी गई थी, हमारा अनुभव यह रहा है कि व्यावहारिक रूप में उसे अवांछनीय पाया गया है। यह राय इस संबंध में हाल ही में हुई घटनाओं के सन्दर्भ में अभी हाल ही में नहीं बनाई गई है। अनेक वर्ष पूर्व, सन् 1958 में, प्रथम विधि आयोग ने अधीनस्थ न्यायपालिका के सुधार के प्रश्न पर विचार किया था। अधीनस्थ न्यायपालिका के पदों को भरने के लिए व्यक्तियों का चयन करने के विषय में लोक सेवा आयोग की भूमिका पर विचार करते हुए, वह इस संबंध में लोक सेवा आयोग की भूमिका के बारे में किसी प्रशंसात्मक निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा था। उसे उद्धृत किया जा रहा है:—

> "अधीनस्थ न्यायपालिका के चयन में लोक सेवा आयोग द्वारा निभाई जाने वाली महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए, हमने यथाशक्य विभिन्न राज्यों के लोक सेवा आयोगों के अध्यक्षों और सदस्यों की परीक्षा करने की सतर्कता बरती। हम यह कहने के लिए विवश हैं कि कुछ राज्यों में इन लोक सेवा आयोगों के सदस्य ऐसे नहीं थे जो दक्षता के या निष्पक्षता के दृष्टिकोण से विश्वास पैदा कर सकें। इस बात में कोई शंका प्रतीत नहीं होती कि कुछ राज्यों में, इन आयोगों में नियुक्तियां योग्यता के आधार पर न की जाकर दल और राजनैतिक सम्बद्धताओं के आधार पर की जाती हैं। कुछ राज्यों के लोक सेवा आयोगों के सदस्यों द्वारा दी गई साक्ष्य से आभास होता है कि वे उन उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर रहने के योग्य नहीं हैं जो वे धारण करते हैं। कुछ दक्षिणी राज्यों में, न्यायिक सेवा के लिए चयन करने में आयोगों की निष्पक्षता पर गंभीर आपत्ति की गई थी"[1]।

5.2. जैसी कि सभी लोक सेवा आयोगों में प्रवृत्ति रही है, स्थिति और भी खराब हो गई होगी। तथापि, इसे केवल अनुमान पर नहीं छोड़ देना चाहिए। उड़ीसा, जम्मू और कश्मीर तथा आन्ध्र प्रदेश के उच्च न्यायालयों ने यह निश्चित राय व्यक्त की है कि अधीनस्थ न्यायपालिका के लिए भरती का कार्य राज्य लोक सेवा आयोग के कार्यक्षेत्र से निकाल लेना चाहिए और उसके स्थान पर वह उच्च न्यायालयों को सौंप दिया जाना चाहिए जो उपयुक्त व्यक्तियों का चयन करने के लिए चयन पद्धति सूचित करेगा। निःसंदेह, कुछ उच्चन्यायालयों के कुछ न्यायाधीशों ने चयन के मामले में लोक सेवा आयोग को बनाए रखने के पक्ष में राय दी है। उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों में से कुछेक ने न्यायिक सेवा आयोग के रूप में नामित किए जाने वाले एक स्वतंत्र निकाय के पक्ष में अपनी राय दी है जो यह कार्य अपने हाथ में लेगा।

5.3. यह प्रश्न की क्या बार में न्यूनतम विधि व्यवसाय, आधारिक स्तर पर की न्यायिक सेवा में प्रवेश के लिए पूर्वापेक्षित शर्त होनी चाहिए, जीवन्त विचार-विमर्श का विषय बन गया है और एक या दूसरे पक्ष में तर्कसंगत विचार व्यक्त किए गए हैं। यह भी

---

1. भारत का विधि आयोग 14वीं रिपोर्ट, खण्ड 1, अध्याय 9, पृष्ठ 27, पृष्ठ 171।

पुनगठन करने के लिए, यह सुझाव दिया जाता है कि राज्य न्यायिक सेवा का पुनर्गठन का उपबंध करने वाली विधि में निम्नलिखित पदाभिधान सम्मिलित और समाविष्ट होने चाहिए।

सिविल साइड में, प्रवेश संवर्ग को 25,000/- रुपए तक की धनीय अधिकारिता के साथ सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) के रूप में पदाभिहित किया जाना चाहिए। दांडिक साइड में वैसे ही पद के धारक का पदाभिधान प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट होना चाहिए जैसा कि दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 6 द्वारा परिकल्पित है। इस संवर्ग के सदस्यों को, जब उन्हें जिला नगरों या उन क्षेत्रों में तैनात किया जाता है जहां सिविल और दांडिक दोनों साइडों में संस्थित मामलों की संख्या बहुत अधिक होती है, अनन्यरूपेण सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) के रूप में और अनन्यरूपेण प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के रूप में पदाभिहित किया जा सकता है। तथापि, उन पदों के धारकों को सामान्य संवर्ग का होना चाहिए और राज्य न्यायिक सेवा वर्ग 2 में रखा जाना चाहिए।

4.11. आगामी प्रोन्नत्यात्मक प्रक्रम से न्यायालयों की आवश्यकताओं की पूर्ति असीमित धनीय अधिकारिता तथा संघ सरकार या राज्य सरकार के विरुद्ध वाद ग्रहण करने की अधिकारिता के साथ होनी चाहिए। इन पदों के धारकों को सिविल न्यायाधीश (क० प्र०) के रूप में पदाभिहित किया जाना चाहिए और उनकी धनीय अधिकारिता की कोई अधिकतम सीमा नहीं होनी चाहिए। इस संवर्ग के अन्तर्गत मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट का संवर्ग भी होना चाहिए। इन पदों के धारक, संस्थित किए जाने वाले मामलों की संख्या पर निर्भर करते हुए, दोनों ही पदाभिधान धारण कर सकते हैं, या जहां संस्थित किए गए मामलों की संख्या को दृष्टिगत रखते हुए, एक व्यक्ति के लिए दोनों साइडों में आने वाले कार्य का निपटारा करना संभव न हो, वहां उसे यथास्थिति अनन्यरूपेण सिविल न्यायाधीश, वरिष्ठ प्रभाव के रूप में या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के रूप में तैनात किया जा सकता है। पदाभिधान "मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट" दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 12 से ग्रहण किया गया है।

4.12. कुछ राज्यों में, मुंसिफ की पदश्रेणी से उच्च पद श्रेणी के अधीनस्थ न्यायाधीशों या सिविल न्यायाधीशों के अधिकारी हैं। इन सभी को निःसंदेह इसमें उपदर्शित किए अनुसार, पुनः पदाभिहित किया जा सकता है और इन पद के धारकों को सामान्य संवर्ग में सम्मिलित किया जा सकता है।

4.13. बड़े वाणिज्यिक नगरों में लघु धनीय विवादों के संबंध में कार्यवाही करने हेतु न्यायालयों की स्थापना का उपबंध करने वाले दो कानून प्रवर्तन में हैं जिनमें संक्षिप्त प्रकार की प्रक्रिया विहित की गई है। वे हैं—प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय और प्रेसीडेंसी नगर लघुवाद न्यायालय। प्रान्तीय लघुवाद न्यायालय के न्यायाधीशों का कृत्यक पदाभिधान लघुवाद न्यायालय का न्यायाधीश हो सकता है किन्तु उन्हें उसी संवर्ग का होना चाहिए जिसके कि सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) होते हैं। इसी प्रकार, प्रेसीडेन्सी लघुवाद न्यायालयों के न्यायाधीशों को महानगर मजिस्ट्रेट के समकक्ष रखा जाना चाहिए और यद्यपि उनके कृत्यक पदाभिधान बने रहेंगे, जैसा कि विभिन्न कानूनों में विहित किया गया है, वे एक संवर्ग के भाग होंगे। राज्य न्यायिक सेवा का प्रत्येक संवर्ग, सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ वर्ग) प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के आधारिक संवर्ग को छोड़कर, राज्य न्यायिक सेवा वर्ग 1 का होगा।

अध्याय 6

निष्कर्ष

6. भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की समवर्ती सूची की प्रविष्टि II द्वारा प्रदत्त शक्तियों को प्रयोग में लाते हुए, संसद् अधीनस्थ न्यायपालिका के संबंध में एक-से मानक लागू करने के लिए विधान अधिनियमित करने के लिए सक्षम है। इस निमित्त राज्य विधानों के स्थान पर एक व्यापक विधान अधिनियमित करना होगा।

इस विधान को निम्नलिखित बातों के लिए उद्दिष्ट होना चाहिए—

(क) जिला तथा सत्र न्यायाधीश के नीचे के पदों के विभिन्न संवर्गों के एक से पदाभिधान। जैसा कि पूर्व में बताया गया है, वे प्रवेश स्तर पर सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) और प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट होने चाहिए। आगामी उच्च स्तर पर, पदाभिधान सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग) और मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट होने चाहिए। जब उन्हें महानगरों में तैनात किया जाता है, तब पदाभिधान महानगर मजिस्ट्रेट होना चाहिए। जहां लघुवाद न्यायालय स्थापित किया जाता है, वहां न्यायाधीश को लघुवाद न्यायालय के न्यायाधीश की संज्ञा दी जानी चाहिए। अन्य सभी पदाभिधान, इसमें उपदर्शित कानून के उपबंध द्वारा विखंडित कर दिए जाने चाहिए, सिवाय उनके जो संविधान के अनुच्छेद 236 में जिला न्यायाधीश की समावेशी परिभाषा में वर्णित हैं। इस निमित्त अधिनियमित किए जाने वाले विधान में, सेवा में प्रवेश के लिए न्यूनतम अर्हताओं के लिए उपबंध होना चाहिए जो विधि की उपाधि, और यद्यपि आवश्यक नहीं है, यदि उचित समझा जाता है तो बार में तीन वर्ष से अनधिक का विधि व्यवसाय ;

(ख) राज्य स्तर पर सेवा को राज्य न्यायिक सेवा की संज्ञा दी जानी चाहिए। वह दो वर्गों में विभाजित की जाएगी, अर्थात् राज्य न्यायिक सेवा प्रथम वर्ग और राज्य न्यायिक सेवा द्वितीय वर्ग। सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग) और प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट को राज्य न्यायिक सेवा द्वितीय वर्ग में रखा जाएगा और उसमें पदों के 100% पदों पर नियुक्ति खुले बाजार से की जाएगी। राज्य न्यायिक सेवा प्रथम वर्ग में कोई सीधी भरती नहीं होगी और उस वर्ग के पद राज्य न्यायिक सेवा द्वितीय वर्ग के सदस्यों को प्रोन्नति के अवसर उपलब्ध कराएंगे ;

(ग) सेवा में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों को, विधि आयोग की 117वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के अनुसार प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ;

(घ) इस निमित्त अधिनियमित की जाने वाली विधि में वेतन, पेंशन, प्रोन्नति के अवसर, प्रोन्नति के लिए पात्रता मापदण्ड, सेवा में प्रवेश के लिए न्यूनतम आयु के संबंध में एक-सी सेवा शर्तों का उपबंध किया जाना चाहिए ;

(ङ) सेवा में भरती का अभिकरण राष्ट्रीय न्यायिक सेवा आयोग होगा जिसके संबंध में विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत की जा रही है। अतः इस रिपोर्ट के आकार में परिवर्धन करना उचित नहीं समझा जाता ;

(च) राष्ट्रीय न्यायिक सेवा आयोग लिखित और मौखिक परीक्षाओं की भी व्यवस्था करेगा जिनके कि सम्मिलित परिणाम के आधार पर राज्य न्यायिक सेवा शाखा द्वितीय वर्ग में प्रवेश दिया जा सकेगा। जबकि विधि आयोग द्वारा अनुशंसित

नई बात नहीं हैं। लगभग तीन दशक पहले भी, विधि आयोग ने बिहार लोक सेवा आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष द्वारा अभिव्यक्त की गई इस राय को ध्यान में रखा कि मुफस्सिल बार में 3–5 वर्ष के विधि व्यवसाय के दौरान नवयुवक का लगभग पूरी तरह अवह्रास हो जाता है। विधि आयोग ने इस संबंध में सिविल जस्टिस कमेटी की राय पर भी ध्यान दिया। वह निम्नानुसार है :—

> "अभ्यर्थियों से बार में तीन वर्ष या उससे अधिक की कालावधि के विधि व्यवसाय की अपेक्षा करने वाला कुछ प्रांतों में प्रवृत्त नियम यह गारन्टी नहीं देता कि अभ्यर्थियों ने वास्तव में उपयोगी अनुभव प्राप्त कर लिया है।"

फिर भी कुछ न्यायाधीशों ने, जिन्होंने आयोग के प्रश्नों का उत्तर दिया, बार में न्यूनतम विधि व्यवसाय को न्यायिक सेवा में प्रवेश के लिए पूर्वापेक्षित शर्त के रूप में बनाए रखने को तरजीह दी। यह समय है जबकि हमें इस प्रश्न पर अपने मस्तिष्क से भ्रम का निवारण कर लेना चाहिए क्योंकि विधि आयोग इस स्वीकारात्मक निष्कर्ष पर पहुंचा है कि बार में न्यूनतम विधि व्यवसाय किसी व्यक्ति को बेहतर न्यायाधीश बनने के लिए अर्हित नहीं बनाता। विधि आयोग ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए सशक्त कारण दिए हैं और यहां उनकी पुनरावृत्ति करना आवश्यक नहीं है।[1]

5.4. सामान्यत:, राज्य स्तर पर अधीनस्थ न्यायपालिका का मानकीकरण करने के विषय में अन्यथा लगभग सर्वसम्मति थी। राज्य स्तर पर न्यायिक सेवा में प्रवेश के लिए एक-समान मानक, राज्य न्यायिक सेवा को, भारतीय न्यायिक सेवा में भरती के लिए विश्वसनीय फोरम बनाने में सहायक होंगे, और यह एक विसंगति है कि जबकि सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता सम्पूर्ण देश में समान रूप से लागू होती है। सभी राज्यों में समान विधियों को कार्यान्वित करने वाले सिविल न्यायाधीशों और न्यायिक मजिस्ट्रेटों के नाम, प्रास्थिति, पदाभिधान, उपलब्धियां और सेवा की अन्य शर्तें भिन्न-भिन्न हैं। यह राष्ट्रीय स्तर, राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय सेवा के लिए सहायक नहीं हैं।

---

1. भारत का विधि आयोग, 117वीं रिपोर्ट।

उपाबन्ध 1

आन्ध्र प्रदेश

उच्चतम न्यायालय

उच्च न्यायालय

जिला तथा सेशन न्यायाधीश—प्रथम श्रेणी

जिला तथा सेशन न्यायाधीश—द्वितीय श्रेणी

- जिला तथा सेशन न्यायाधीश (द्वितीय श्रेणी)
- मुख्य न्यायाधीश, नगर सिविल न्यायालय
  - अपर मुख्य न्यायाधीश, नगर सिविल न्यायालय
- मुख्य न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय
- मुख्य नगर मजिस्ट्रेट
- अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश

अधीनस्थ न्यायाधीश

जिला मुन्सिफ

- मुन्सिफ मजिस्ट्रेट
- नगर मजिस्ट्रेट
- सहायक न्यायाधीश, नगर सिविल न्यायालय
- रेलवे मजिस्ट्रेट
- नगरपालिक मजिस्ट्रेट
- मजिस्ट्रेट किशोर-न्यायालय

अकादमी,[1] आधारिक न्यायपालिका की आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए, परीक्षा के लिए ब्यौरेवार पाठ्यचर्या विहित करेगी, विषयों को स्थूलतः निम्नानुसार उपदर्शित किया जा सकता है:—

(एक) सामान्य ज्ञान ;

(दो) प्रक्रियात्मक विधियां, सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता, तथा साक्ष्य अधिनियम ;

(तीन) न्यायपालिका से समाज की आशाएं;

(चार) 50 से अनधिक अंकों की साधारण मौखिक परीक्षा अवश्य विहित की जानी चाहिए ;

(पांच) निर्णय लिखने की कला ;

(छ) अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों और सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए सामान्य आरक्षण किया जाना चाहिए ;

(ज) जहां अभ्यर्थी की मातृभाषा उस क्षेत्र में बोली जाने वाली भाषा से भिन्न हो जहांकि उसे तैनात किया जाता है, वहां स्थानीय भाषा का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ;

(झ) न्यायिक पदों के लिए व्यक्तियों के चयन के संबंध में लोक सेवा आयोग की भूमिका पूर्णतः अपवर्जित कर दी जानी चाहिए।

हस्ता० (डी० ए० देसाई)
अध्यक्ष

हस्ता० (एस० सी० घोष)
सदस्य

हस्ता० (श्रीमती वी० एस० रमादेवी)
सदस्य सचिव

नई दिल्ली,

तारीख 26 दिसम्बर, 1986

1. भारत का विधि आयोग, 117वीं रिपोर्ट।

दिल्ली

- उच्चतम न्यायालय
  - उच्च न्यायालय
    - जिला तथा सेशन न्यायाधीश
      - अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
        - वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश
          - अपर वरिष्ठ अधीनस्थ न्यायाधीश
            - अधीनस्थ न्यायाधीश
        - न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय
        - मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
          - अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
            - महानगर मजिस्ट्रेट

बिहार

उच्चतम न्यायालय

उच्च न्यायालय

जिला तथा सेशन न्यायाधीश

अपर जिला तथा सत्र न्यायाधीश

अधीनस्थ न्यायालय

मुन्सिफ

हरियाणा

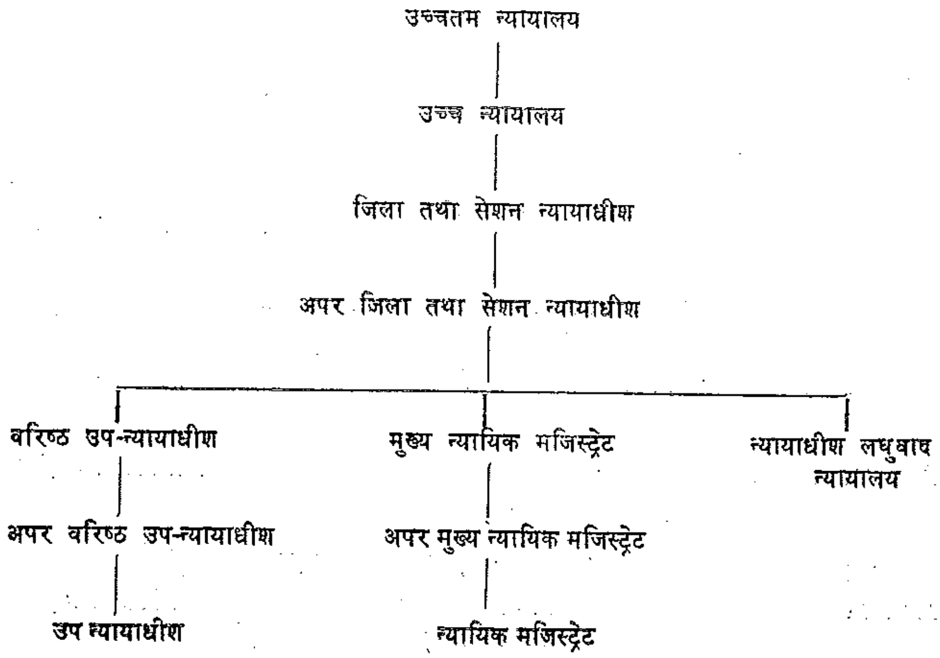
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
वरिष्ठ उप-न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय
अपर वरिष्ठ उप-न्यायाधीश
अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
उप न्यायाधीश
न्यायिक मजिस्ट्रेट

गुजरात

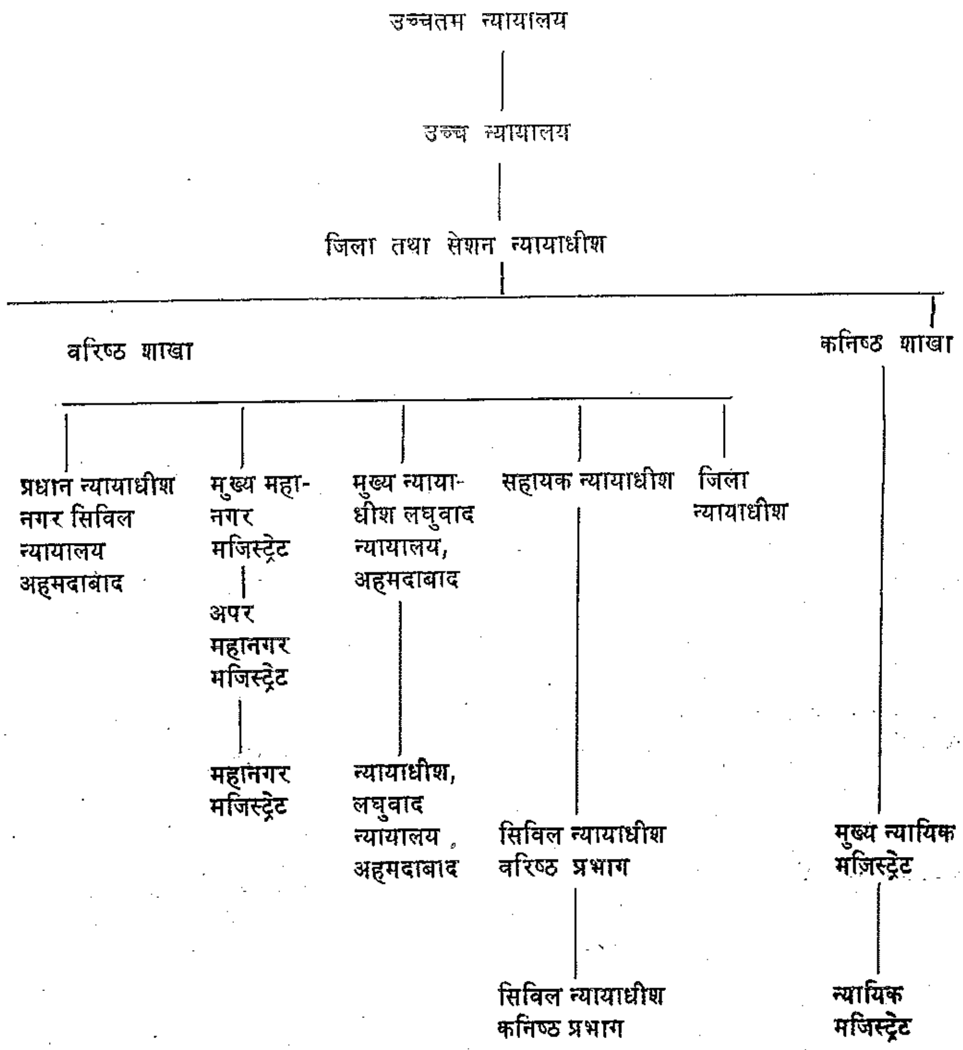
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
वरिष्ठ शाखा
कनिष्ठ शाखा
प्रधान न्यायाधीश नगर सिविल न्यायालय अहमदाबाद
मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
अपर महानगर मजिस्ट्रेट
महानगर मजिस्ट्रेट
मुख्य न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय, अहमदाबाद
न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय, अहमदाबाद
सहायक न्यायाधीश
सिविल न्यायाधीश वरिष्ठ प्रभाग
सिविल न्यायाधीश कनिष्ठ प्रभाग
जिला न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
न्यायिक मजिस्ट्रेट

कर्नाटक

उच्चतम न्यायालय
|
उच्च न्यायालय
|
जिला न्यायाधीश
|
सिविल न्यायाधीश
|
मुन्सिफ

हिमाचल प्रदेश

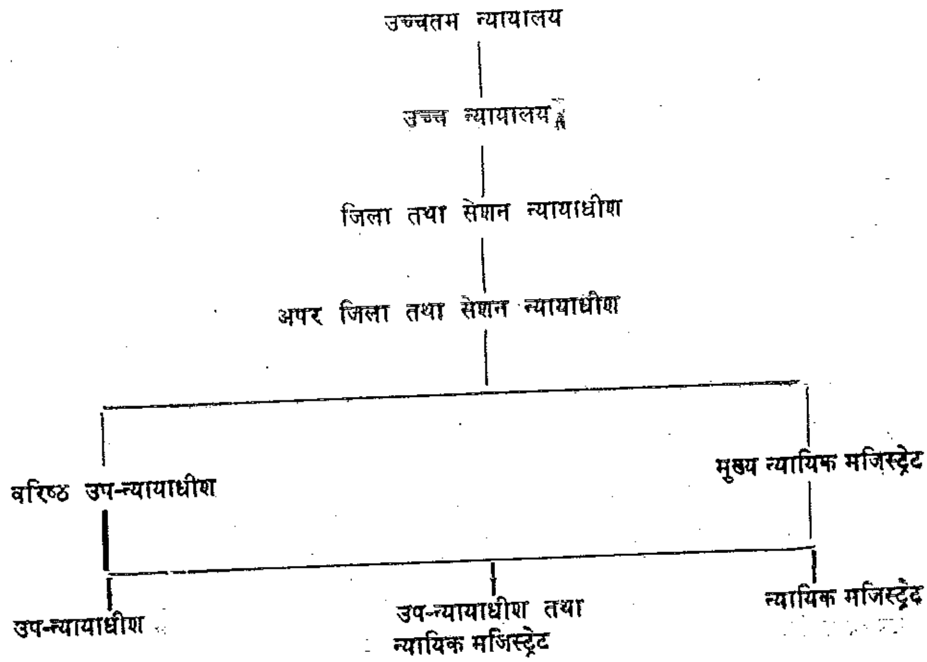
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
वरिष्ठ उप-न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
उप-न्यायाधीश
उप-न्यायाधीश तथा न्यायिक मजिस्ट्रेट
न्यायिक मजिस्ट्रेट

मध्य प्रदेश

उच्चतम न्यायालय
|
उच्च न्यायालय
|
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
|
अपर जिला न्यायाधीश
|
सिविल न्यायाधीश (प्रथम वर्ग)
|
सिविल न्यायाधीश (द्वितीय वर्ग)

केरल

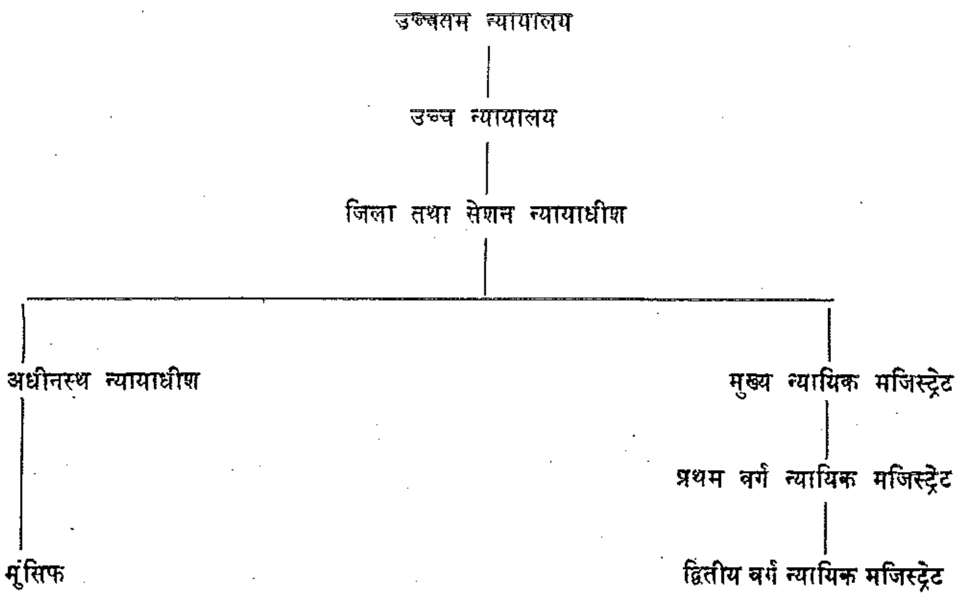
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अधीनस्थ न्यायाधीश
मुंसिफ
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट
द्वितीय वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट

मणीपुर

- उच्चतम न्यायालय
  - उच्च न्यायालय
    - जिला न्यायाधीश
      - अपर जिला न्यायाधीश
        - उप-न्यायाधीश
          - मुन्सिफ
        - मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
          - मजिस्ट्रेट

महाराष्ट्र

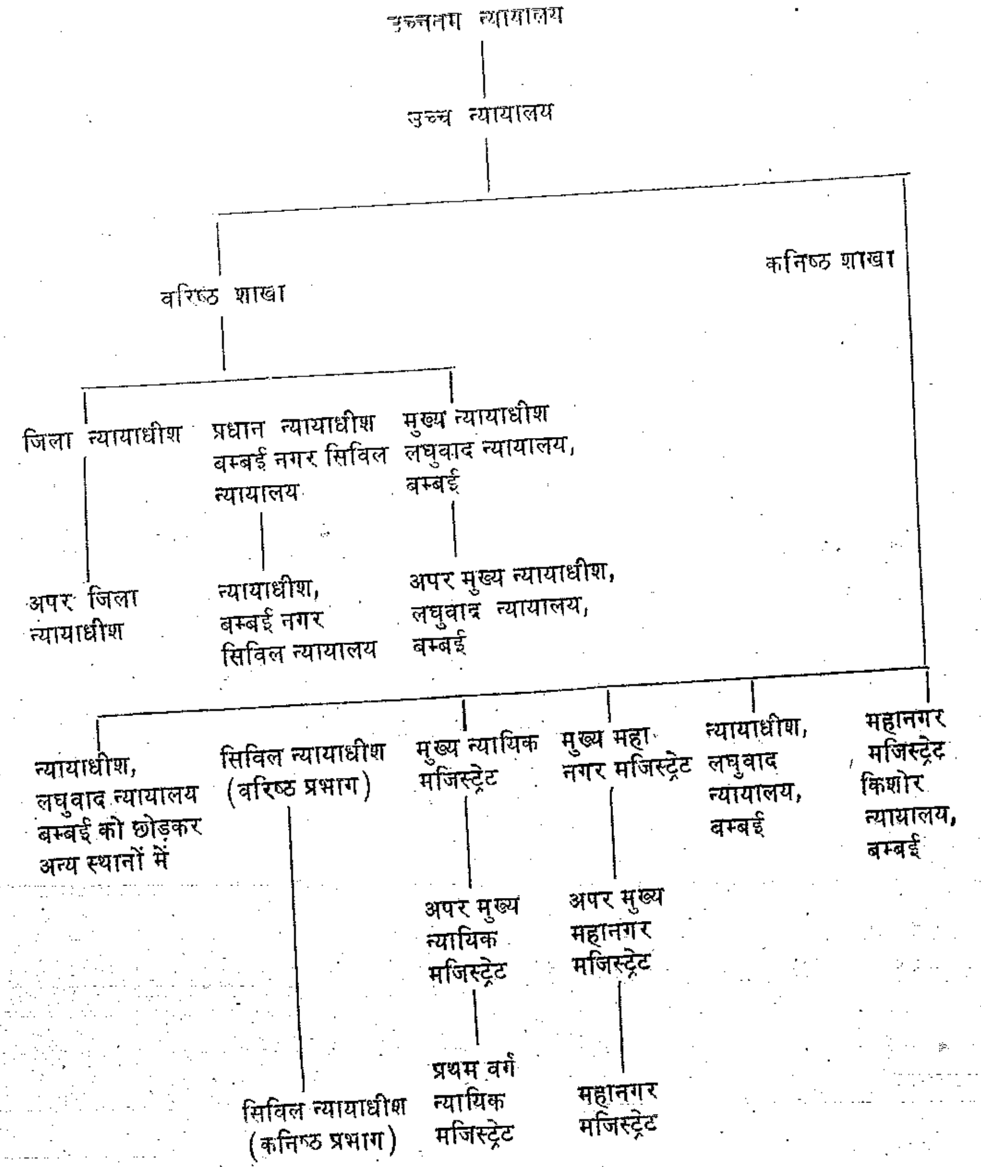
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
वरिष्ठ शाखा
कनिष्ठ शाखा
जिला न्यायाधीश
प्रधान न्यायाधीश बम्बई नगर सिविल न्यायालय
मुख्य न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय, बम्बई
अपर जिला न्यायाधीश
न्यायाधीश, बम्बई नगर सिविल न्यायालय
अपर मुख्य न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय, बम्बई
न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय बम्बई को छोड़कर अन्य स्थानों में
सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ प्रभाग)
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय, बम्बई
महानगर मजिस्ट्रेट किशोर न्यायालय, बम्बई
अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
अपर मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ प्रभाग)
प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट
महानगर मजिस्ट्रेट

पंजाब

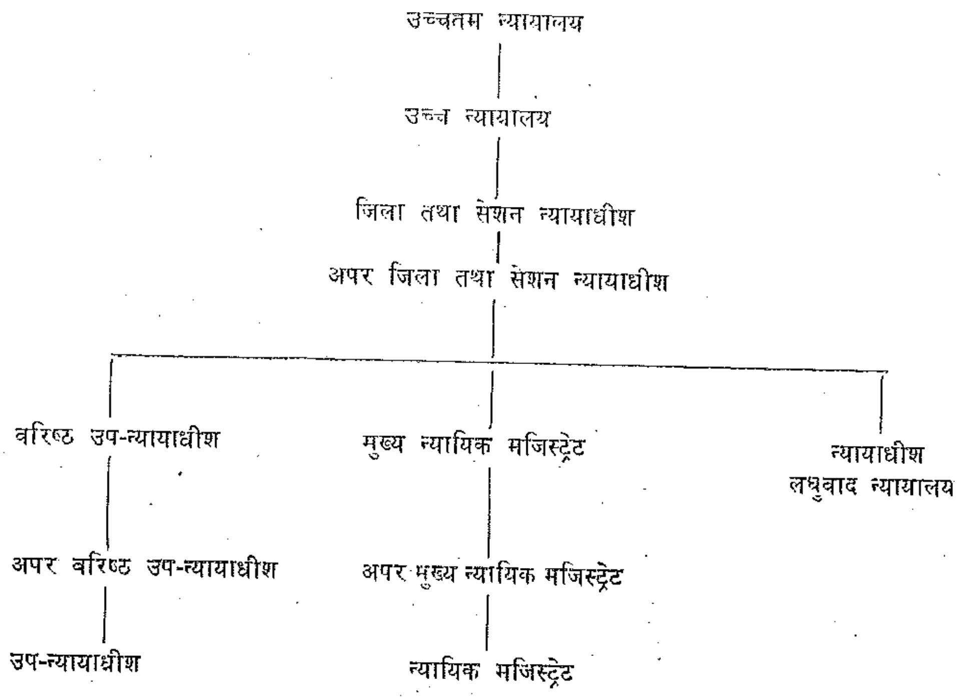
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
वरिष्ठ उप-न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय
अपर वरिष्ठ उप-न्यायाधीश
अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
उप-न्यायाधीश
न्यायिक मजिस्ट्रेट

उड़ीसा

उच्चतम न्यायालय
|
उच्च न्यायालय
|
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
|
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
|
अधीनस्थ न्यायाधीश (प्रथम वर्ग)
|
मुन्सिफ (द्वितीय वर्ग)

तमिलनाडु

- उच्चतम न्यायालय
  - उच्च न्यायालय
    - जिला तथा सेशन न्यायाधीश
      - अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
        - दाण्डिक
          - मुख्य महानगर मजिस्ट्रेट
            - महानगर मजिस्ट्रेट
          - जिला मजिस्ट्रेट (न्यायिक)
            - अपर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट
              - अधीनस्थ न्यायिक मजिस्ट्रेट
        - सिविल
          - अधीनस्थ न्यायाधीश
            - जिला मुन्सिफ
          - सहायक न्यायाधीश नगर सिविल न्यायालय, मद्रास
          - अवर न्यायाधीश लघुवाद न्यायालय, मद्रास

राजस्थान

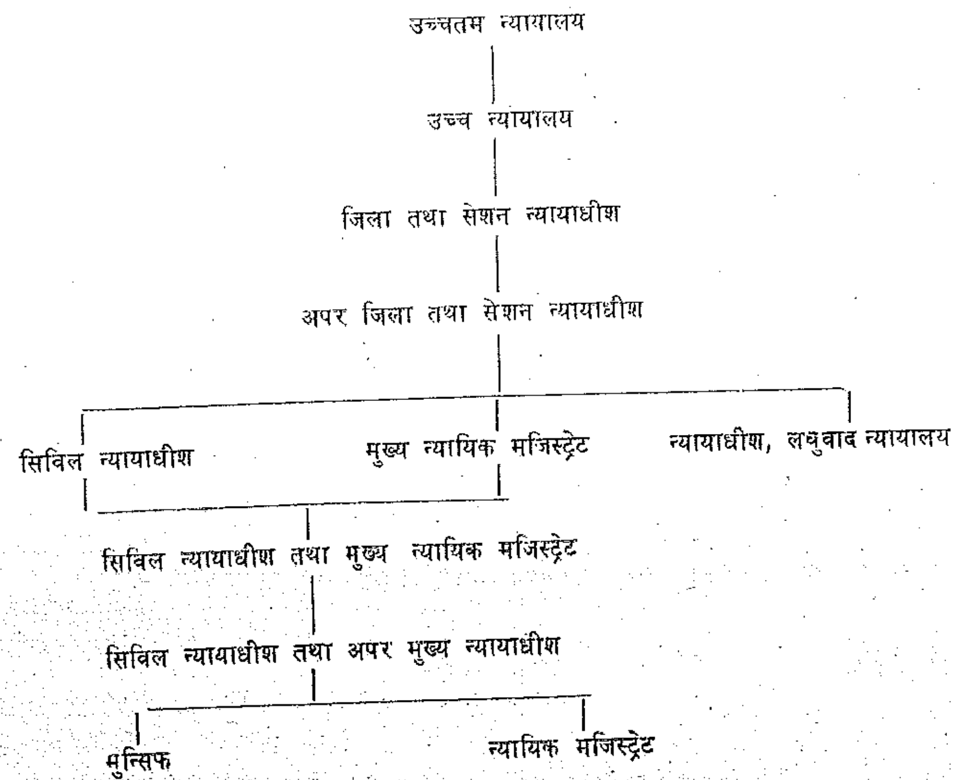
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
सिविल न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय
सिविल न्यायाधीश तथा मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
सिविल न्यायाधीश तथा अपर मुख्य न्यायाधीश
मुन्सिफ
न्यायिक मजिस्ट्रेट

उपाबंध 2

क्रमांक	राज्य	उप-न्यायधीशों के प्रवर्ग	भरती के लिए अभिकरण	अन्य निकायों का प्रतिनिधित्व और उनकी शक्तियां	नियुक्ति प्राधिकारी	शैक्षणिक अर्हताएं	पात्रता: आयु	पात्रता: अनुभव — बार	पात्रता: अनुभव — अन्य
1	2	3	4	5	6	7	8		9
1.	आन्ध्र प्रदेश	1. अधीनस्थ न्यायाधीश 2. जिला मुन्सिफ	लोक सेवा आयोग	उच्च न्यायालय का न्यायाधीश किन्तु अंक देने की शक्ति नहीं	राज्यपाल	स्थानान्तरण— (1) विधि में उपाधि (2) व्यवहार और प्रक्रिया विधि की परीक्षा पास	सीधी भरती—32 वर्ष से कम स्थानान्तर—45 वर्ष से कम	कम से कम तीन वर्ष तक वास्तविक विधि व्यवसाय	—
2.	असम (विधि आयोग को नियमों के केवल उद्धरण ही उपलब्ध कराए गए)	श्रेणी 1, 2 और 3 श्रेणी 3	लोक सेवा आयोग उच्च न्यायालय	—	राज्यपाल				
3.	बिहार	एक—अधीनस्थ न्यायाधीश दो—मुन्सिफ	लोक सेवा आयोग	सलाह देने के लिए उच्च न्यायालय का एक अधिकारी	राज्यपाल	विधि में स्नातक की उपाधि	22—39 वर्ष	एक वर्ष	
4.	बम्बई	प्रथम वर्ग में छह प्रवर्ग हैं	उच्च न्यायालय/ लोक सेवा आयोग		राज्यपाल/ उच्च न्यायालय		21—45 वर्ष विभिन्न प्रवर्गों के लिए भिन्न-भिन्न	हां	

त्रिपुरा

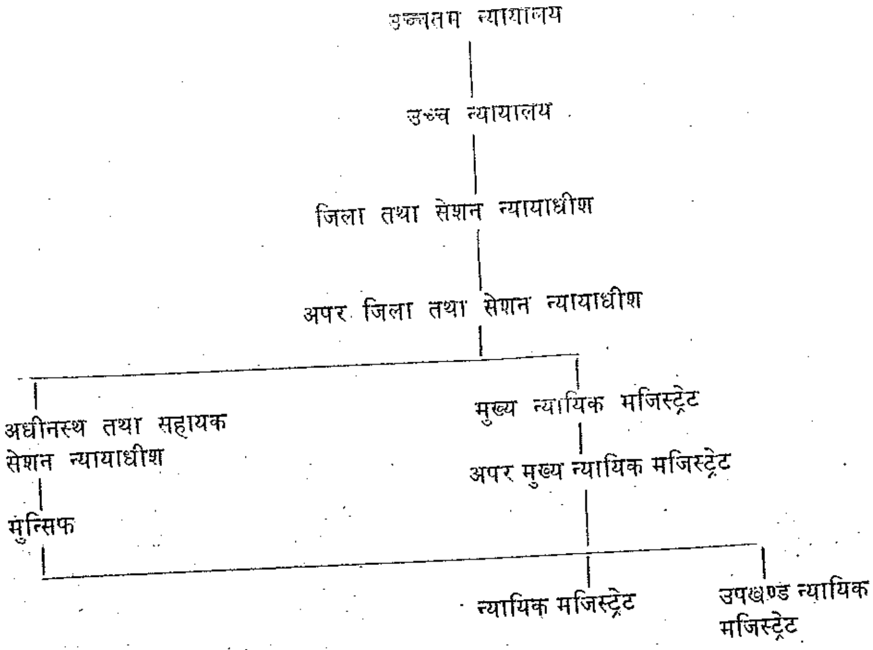
उच्चतम न्यायालय
उच्च न्यायालय
जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अपर जिला तथा सेशन न्यायाधीश
अधीनस्थ तथा सहायक सेशन न्यायाधीश
मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट
मुन्सिफ
न्यायिक मजिस्ट्रेट
उपखण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट

1	2	3	4	5	6	7	8		9
5.	दिल्ली	प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी	उच्च न्यायालय	(1) मुख्य न्यायमूर्ति या मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा भेजा गया न्यायाधीश (2) मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नामनिर्दिष्ट उच्च न्यायालय के दो न्यायाधीश (3) मुख्य सचिव दिल्ली प्रशासन (4) प्रशासक द्वारा नामनिर्दिष्ट दिल्ली प्रशासन का सचिव	प्रशासक	विधि व्यवसाय करने वाला अधिवक्ता या अधिवक्ता के रूप में रजिस्ट्रीकृत किए जाने के लिए अर्हित	32 वर्ष से अधिक नहीं		
6.	गुजरात	कनिष्ठ शाखा प्रथम वर्ग और द्वितीय वर्ग	लोक सेवा आयोग	उच्च न्यायालय	राज्यपाल	विधि स्नातक (विशेष) उपाधि—या अधिवक्ता के रूप में नामांकित किए जाने के लिए अर्हित	(i) 21—35 वर्ष (ii) 45 वर्ष तक—राज्य सरकार के कुछ पदधारियों के लिए	तीन वर्ष और पांच वर्ष	

क्रमांक	राज्य	कोटा	पद्धति			भाषा संबंधी अपेक्षा	आपात भरती	निरर्हताएं
			लिखित परीक्षा	मौखिक परीक्षा	दोनों			
1	2	10	11			12	13	14
1.	आन्ध्र प्रदेश	सीधी भरती-प्रथम चार स्थानान्तरण-प्रत्येक पांचवां			हां			द्विविवाह
2.	असम (विधि आयोग को नियमों के केवल उद्धरण ही उपलब्ध कराए गए)	सीधी भरती- 20% और वार के सदस्यों में से चयन 50%	हां					
3.	बिहार				हां	हिन्दी		द्विविवाह, किन्तु शिथिल-करणीय
4.	बम्बई	बदलता रहता है		हां		मराठी	सेवा निवृत्त न्यायाधीशों को नियुक्त किया जा सकता है।	

1	2	3	4	5	6	7	8	9
7.	हरियाणा	उप-न्यायाधीश	लोक सेवा आयोग		राज्यपाल	सीधी भरती के लिए विधि की उपाधि	23—30 वर्ष (ऐसे प्लीडरों के लिए जिनने दो वर्ष से अधिक विधि व्यवसाय किया हो 35 वर्ष तक शिथिलनीय) कुछ प्रवर्गों के लिए 37 वर्ष तक शिथिलनीय	चार वर्ष
8.	हिमाचल प्रदेश	प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी	लोक सेवा आयोग	उच्च न्यायालय	राज्यपाल	विधि में उपाधि	21—30 वर्ष कुछ प्रवर्गों के लिए 40 वर्ष तक शिथिलनीय	
9.	कर्नाटक	i. सिविल न्यायाधीश ii. मुन्सिफ	कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा गठित उच्च न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की समिति			विधि में उपाधि	25—38 वर्ष	4 वर्ष
10.	केरल	सिविल— i. अधीनस्थ न्यायाधीश ii. मुन्सिफ	लोक सेवा आयोग	—	राज्यपाल	विधि में उपाधि	35 वर्ष से कम	5 वर्ष
		दाण्डिक—मजिस्ट्रेटों के चार प्रवर्ग	लोक सेवा आयोग	—	राज्यपाल	विधि में उपाधि	32 वर्ष से कम	3 वर्ष

1	2	10	11			12	13	14
5.	दिल्ली	100% सीधी भरती			हां	हिन्दी और अंग्रेजी		द्विविवाह, किन्तु शिथिल-करणीय
6.	गुजरात	100% सीधी भरती			हां	अंग्रेजी, हिन्दी और गुजराती		

1	2	3	4	5	6	7	8	9	
11.	मध्यप्रदेश (भरती नियम अभी बनने हैं—किन्तु राज्य में प्रचलित प्रथा उपदर्शित की जाती है)	सिविल न्यायाधीश प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी	लोक सेवा आयोग	—	राज्यपाल	विधि में उपाधि	20—30 वर्ष	—	
12.	मणीपुर	द्वितीय श्रेणी—उप-न्यायाधीश/मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट तृतीय श्रेणी मुन्सिफ/मजिस्ट्रेट	लोक सेवा आयोग	—	राज्यपाल	विधि में उपाधि	सीधी भरती के लिए 22—32 वर्ष वार के सदस्यों के लिए 20—35 वर्ष	वार के सदस्यों के लिए तीन वर्ष	2/3 सीधी भरती द्वारा और 1/3 वार से चयन द्वारा
13.	मेघालय (भरती नियमों को अंतिम रूप नहीं दिया गया है। किन्तु भरती राज्य लोक सेवा आयोग की मार्फत की जाती है) और नियुक्तियां राज्य सरकार द्वारा, गवहाटी उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाती है								
14.	उड़ीसा	प्रथम वर्ग उप-न्यायाधीश द्वितीय वर्ग उप-न्यायाधीश	लोक सेवा आयोग	उच्च न्यायालय	राज्यपाल	विधि में उपाधि	परिवीक्षकों के लिए 21—28 वर्ष और अस्थायी भरती के लिए 32 वर्ष अभ्यर्थियों के कतिपय वर्गों के लिए शिथिलनीय		

1	2	10	11			12	13	14
7.	हरियाणा	(i) सीधी भरती (ii) ह० सि० सेवा (कार्य-पालक शाखा) (iii) ह० सि० सेवा (कार्य-पालक शाखा)—विधि उपाधि के साथ परन्तु प्रवर्ग (iii) के लिए कोटा, सीधी भरती के 20% से अधिक नहीं होगा			हां	हिन्दी		द्विविवाह, किन्तु शिथिल-करणीय
8.	हिमाचल प्रदेश	100% सीधी भरती			हां	हिन्दी	राज्यपाल हि० प्र० सेवा अधिकारियों में से नियुक्ति कर सकेगा यदि वे विधि स्नातक हों	द्विविवाह, किन्तु शिथिल-करणीय
9.	कर्नाटक	—			हां	कन्नड और अंग्रेजी		
10.	केरल	प्रत्येक प्रथम और तृतीय सीधी भरती और प्रत्येक द्वितीय द्वारा स्थानान्तरण			हां		हां, बशर्ते पदधारी अर्हताएं रखता हो	
		बारी-बारी से सीधी भरती और राज्य सरकार के कतिपय अधिधारियों के स्थानान्तरण द्वारा			हां		,,	

1	2	3	4	5	6	7	8	9
15.	पंजाब	उप-न्यायाधीश	लोक सेवा आयोग	उच्च न्यायालय परीक्षा के विषयों का सुझाव दे सकता है	राज्यपाल (राज्य सरकार पंजाब सिविल सेवा (का० शा०) से अधिकारियों की और कतिपय अन्य अधिकारियों को उप न्यायाधीश के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्ति कर सकती है, भले उनके पास विधि की उपाधि न हो	सामान्यतः विधि में उपाधि		
16.	राजस्थान	मुंसिफ	लोक सेवा आयोग	उच्च-न्यायालय का न्यायाधीश मौखिक परीक्षा में विशेषज्ञ	राज्यपाल	विधि में उपाधि	35 वर्ष से कम	
17.	तमिलनाडु	न्यायिक सेवाएं—प्रथम प्रवर्ग—उप-न्यायाधीश द्वितीय प्रवर्ग-जिला मुंसिफ	लोक सेवा आयोग		राज्यपाल	सीधी भरती के लिए बी० ए०/बी० एससी०/बी० काम०/आनर्स डिग्री अन्तरितियों के लिए बी०ए०/बी०एससी०/बी०काम०/आनर्स की उपाधि और बी०एल० या एल० एल०बी०	सीधी भरती के लिए 32 वर्ष 45 वर्ष से कम	3 वर्ष का वास्तविक विधि व्यवसाय
		मजिटेरियल सेवाएं प्रथम प्रवर्ग—अवर प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वितीय प्रवर्ग—अधीनस्थ मजिस्ट्रेट	लोक सेवा आयोग		राज्यपाल	अंतरितियों के लिए स्नातक उपाधि और विधि की उपाधि	अंतरितियों के लिए 35 वर्ष से कम सीधी भरती के लिए 30 वर्ष से कम	2वर्ष/5वर्ष 2 वर्ष

1	2	10			11	12	13	14
11.	मध्यप्रदेश (भरती नियम अभी बनने हैं—किन्तु राज्य में प्रचलित प्रथा उपदर्शित की जाती है)	100% सीधी भरती			हां			
12.	मणीपुर				हां	अंग्रेजी		
13.	मेघालय (भरती नियमों को अंतिम रूप नहीं दिया गया है। किन्तु भरती राज्य लोक सेवा आयोग की मार्फत की जाती है, और नियुक्तियां राज्य सरकार द्वारा, गवहाटी उच्च न्यायालय के परामर्श से की जाती है।							
14.	उड़ीसा	100% सीधी भरती			हां	उड़िया	आपात भरती नियम, 1979 विधि की उपाधि आयु 28—40 वर्ष, उड़िया भाषा बार में 5 वर्ष का विधि व्यवसाय उच्च न्यायालय के नामनिर्देशिती के साथ लोक सेवा आयोग साक्षात्कार द्वारा चयन	

1	2	3	4	5	6	7	8	9
18.	त्रिपुरा	तृतीय श्रेणी 5 प्रवर्गों से बना है ।	लोक सेवा आयोग/ उच्च न्यायालय		राज्यपाल	विधि में उपाधि	सीधी भरती के लिए 22—35 और वार के सदस्यों के लिए 25—40	वार के सदस्यों के लिए 3 वर्ष
19.	पश्चिमी बंगाल		लोक सेवा आयोग उच्च न्यायालय		राज्यपाल	विधि में उपाधि	सीधी भरती के लिए 21—32 और वार के सदस्यों के लिए 27—32	वार के सदस्यों के लिए 3 वर्ष

1	2	10	11		12	13	14
18.	त्रिपुरा	50% सीधी भरती द्वारा और 50% वार से चयन द्वारा		हां	बंगाली		द्विविवाह
19.	पश्चिमी बंगाल	50% प्रतियोगी परीक्षा द्वारा और 50% वार से चयन द्वारा		दोनों	बंगाली और अंग्रेजी		

MGIPCBE—S 6—1 M ofL & J/87—27-2-88.—310.

1	2	10	11			12	13	14
15.	पंजाब				हां	पंजाबी (गुरुमुखी)		द्विविवाह, किन्तु शिथिल-नीय
16.	राजस्थान	100% सीधी भरती			हां	हिन्दी		पूर्व दोषसिद्धि वर्जना नहीं है, बशर्ते पुलिस अधीक्षक या उत्तर रक्षा गृह कारागार महानिरीक्षक का प्रमाणपत्र दिया जाता है।
17.	तमिलनाडु	प्रत्येक 20 पदों में से, 11 सीधी भरती द्वारा और 9 राज्य सरकार के कतिपय वर्ग के अधिकारियों के स्थानान्तरण द्वारा				तामिल	हां, आवश्यक अर्हताओं के अध्यधीन	द्विविवाह
						तामिल	अस्थायी नियुक्तियां	द्विविवाह